भाषाविज्ञान एवं हिंदी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भाषाविज्ञान
एवं
हिंदी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मूल्य : तीस रुपये (Rs. 30.00)

प्रथम संस्करण : 2007 © डॉ: नरेश मिश्र
ISBN-13 : 978-81-7028-709-4

BHASHAVIGYAN EVAM HINDI (Hindi Liguistics)
by Dr. Naresh Mishra

राजपाल एण्ड सन्ज़, कश्मीरी गेट, दिल्ली-110 006
www.rajpalsons.com
email : mail@rajpalsons.com

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भाषाविज्ञान एवं हिंदी

डॉ. नरेश मिश्र
प्रोफेसर एवं पूर्व अध्यक्ष, हिंदी विभाग
डीन, परफार्मिंग एंड विजुअल आर्ट्स फैकल्टी
महर्षि दयानंद विश्वविद्यालय, रोहतक (हरियाणा)

राजपाल

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अनुक्रम

भूमिका 5

1. भाषा परिचय
   1.1. भाषा की परिभाषा एवं भाषा के विविध रूप 9
   1.2. भाषा की प्रकृति 15
   1.3 भाषा की व्याकरणीय व्यवस्था 21
   1.4. भाषा-अध्ययन की दिशाएँ 30
   1.5. भाषा-अध्ययन के लक्ष्य 33
2. मानक हिंदी एवं उनकी बोलियाँ
   2.1. मानक हिंदी का स्वरूप 40
   2.2. हिंदी की उपभाषाएँ एवं बोलियाँ 44
      2.2.1. पश्चिमी हिंदी की बोलियाँ 44
      2.2.2. पूर्वी हिंदी की बोलियाँ 49
   2.3 हरियाणवी 53
3. हिंदी स्वन, शब्द एवं हिंदी प्रसार-आंदोलन
   3.1 हिंदी स्वन 56
      3.1.1 हिंदी स्वर : परिभाषा और वर्गीकरण 56
      3.1.2 हिंदी व्यंजन : परिभाषा और वर्गीकरण 59
   3.2 शब्द की परिभाषा और शब्द-समूह का वर्गीकरण 65
   3.3 हिंदी वर्तनी 68

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

3.4 हिंदी-प्रचार-प्रसार में प्रमुख व्यक्तियों का योगदान 77

4. हिंदी पद एवं अर्थ

4.1 पद एवं हिंदी पद-भेद 85

4.2 हिंदी समस्तपद 88

4.3 अर्थ : परिभाषा एवं शब्द-अर्थ संबंध 91

4.4 अर्थ-परिवर्तन की दिशाएँ 94

5. नागरी लिपि

5.1. नागरी लिपि का वर्तमान स्वरूप 98

5.2. नागरी लिपि की विशेषताएँ (वैज्ञानिकता) 101

5.3. नागरी लिपि का मानकीकरण 106

6. हिंदी कंप्यूटिंग

6.1 कंप्यूटर : परिचय एवं महत्त्व 112

6.2 कंप्यूटर का संरचनात्मक स्वरूप 115

6.3. आँकड़ा संसाधन 120

6.4. वर्तनी संशोधन 124

6.5 इंटरनेट का ऐतिहासिक परिचय 127

6.6 इंटरनेट : कार्य-प्रणाली एवं सुविधाएँ 131

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

1

भाषा परिचय

1.1. भाषा की परिभाषा एवं भाषा के विविध रूप

भाषा शब्द संस्कृत की भाष् धातु से निर्मित है। इसका शाब्दिक अर्थ है—व्यक्त या स्पष्ट वाणी अर्थात् बोलना या कहना।

भावाभिव्यक्ति के साधन को भाषा कहते हैं।

भाषा को परिभाषित करते हुए विभिन्न विद्वानों ने अपने विचार व्यक्त किए हैं। कुछ विद्वानों की परिभाषाएँ उल्लेखनीय हैं—

1. प्रसिद्ध वैयाकरण पं. कामता प्रसाद गुरु ने 'हिंदी व्याकरण' में भाषा को परिभाषित करते हुए लिखा है, "भाषा वह साधन है जिसके द्वारा मनुष्य अपने विचार दूसरों पर भली-भाँति प्रकट कर सकता है और दूसरों के विचार आप स्पष्टतया समझ सकता है।"

2. डॉ. भोलानाथ तिवारी ने 'भाषाविज्ञान' में भाषा को इस प्रकार परिभाषित किया है, "भाषा उच्चारण अवयवों से उच्चरित मूलतः प्रायः यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है, जिसके द्वारा किसी भाषा-समाज के लोग आपस में विचारों का आदान-प्रदान करते हैं।"

3. ब्लाक एंड ट्रेगर—के अनुसार, "A Language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which a social group co-operates."

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मेरे विचार से भाषा को वैज्ञानिक रूप में इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं :

"भाषा मानव मुखोच्चारित यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों की वह व्यवस्था है जिसके माध्यम से एक भाषा-समुदाय के सदस्य परस्पर विचार-विनिमय करते हैं।"

भाषा के विविध रूप

भाषा सामाजिकता का मूल आधार है। भाषा की उत्पत्ति समाज में हुई है और समाज का विकास भाषा के आधार पर हुआ है। इस प्रकार भाषा और समाज दोनों अन्योन्याश्रित हैं। समाज के विविध संदर्भों में भाषा वैविध्यपूर्ण प्रयोग होता है। इस आधार पर भाषा को निम्नलिखित प्रमुख वर्गों में रख कर अध्ययन कर सकते हैं—

बोली (Dialect)—इसके लिए विभिन्न विद्वानों द्वारा विभाषा, उपभाषा, भाषिका और उपप्रादेशिका आदि नाम दिए गए हैं। बोली के उद्भव और विकास का मुख्य आधार है—एक भाषा भाषियों का दो या दो से अधिक स्थानों पर दूर-दूर बस जाना। उन विभिन्न क्षेत्रों की भाषा में उनके प्रयोक्ताओं की परिस्थितियों और आवश्यकताओं के आधार पर धीरे-धीरे पर्याप्त परिवर्तन हो जाता है, तो बोली का उद्भव और विकास होता है। बोली विकास में स्थान की दूरी के साथ सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक कारणों की भूमिका भी संभावित होती है। इस प्रकार जब एक भाषा के अंतर्गत दो या अधिक रूप विकसित हो जाते हैं, तो उन्हें बोली कहते हैं।

एक बोली में एकाधिक उपबोलियों की संभावना होती है। भाषा की विभिन्न बोलियों की विशेषताओं में भिन्नता होना अनिवार्य है। बोली के प्रयोगकर्ताओं की संख्या उससे संबंधित किसी भी उपबोली के प्रयोगकर्ताओं की संख्या से कहीं अधिक होती हैं, क्योंकि उससे संबंधित विभिन्न उपबोलियों का संयुक्त रूप ही बोली है। एक बोली के अंतर्गत आनेवाली विभिन्न उपबोलियों के लोग आपस की भाषा को सरलता से समझ लेते हैं, क्योंकि विभिन्न उपबोलियों ध्वनि, शब्द, पद, वाक्य और अर्थ-संरचना

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में कुछ भिन्नता के साथ आधारभूत पर्याप्त समानताएँ होती हैं।

भावादान-प्रदान में बोली का विशेष महत्त्व है, क्योंकि बोली मनुष्य द्वारा प्रयुक्त सहज भाषा है। प्रत्येक बोली-क्षेत्र का व्यक्ति अपनी बोली में भावों की अभिव्यक्ति कहीं अधिक प्रभावशाली ढंग से करता है। बोली में तत्संबंधित सामाजिक और सांस्कृतिक भावों को सहज अभिव्यक्ति मिलती है। बोली ही विकसित होकर भाषा का रूप धारण करती है। मध्यकाल में अवधी और ब्रज विकसित हो कर भाषा बन गईं, तो आधुनिक काल में खड़ी बोली सामाजिक स्वीकृति, राजनीतिक संरक्षण और साहित्यिक संवर्धन से राजभाषा और राष्ट्रभाषा बन गई।

2. भाषा (Language)–कोई बोली जब व्याकरणसम्मत होकर समाज स्वीकृति पा लेती है, तो उसे भाषा का स्वरूप मिल जाता है। इसमें साहित्य-सृजन के साथ इसे राजनीतिक संरक्षण भी प्राप्त होना अपेक्षित होता है। डॉ. भोलानाथ तिवारी ने बोली से भाषा के विकास क्रम को इस प्रकार स्पष्ट किया है, "एक भाषा-क्षेत्र (जिसमें कई बोलियाँ हों) की कोई एक बोली आदर्श मान ली जाए और पूरे क्षेत्र से संबंधित कार्यों के लिए उसका प्रयोग हो, उसे आदर्श परिनिष्ठित भाषा कहा जाता है।"

किसी भी भाषा-क्षेत्र के प्रायः सभी शिक्षित वर्ग उसी भाषा में पत्र-व्यवहार करते हैं। समाचार-पत्र और पत्रिकाएँ भी उसी भाषा में प्रकाशित होती हैं। उस क्षेत्र का साहित्य भी मुख्यतः उसी भाषा में रचा जाता है। विद्वानों की चर्चा गोष्ठियों और सम्मेलनों में भी उस भाषा को ही मुख्यतः आधार बनाते हैं।

सरकार के द्वारा भाषा को मान्यता मिलने से उसका महत्त्व और भी बढ़ जाता है। भारत सरकार द्वारा मान्यता प्राप्त भाषाओं को राष्ट्रीय भाषाएँ (National Languages) कहते हैं। वर्तमान समय के भारतीय संविधान में बाईस भाषाओं को राष्ट्रीय भाषाओं के रूप में मान्यता प्राप्त है। इसी आधार पर भारत को बहुभाषी देश कहा गया है।

इस प्रकार भाषा का समाज-स्वीकृत और व्याकरणसम्मत रूप होना अनिवार्य है। समृद्ध साहित्य सृजन और प्रशासन संरक्षण भाषा को गतिशील

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

रूप प्रदान करता है।

3. राजभाषा (Official Language) –जिस भाषा में प्रदेश या देश का राज-कार्य होता है, उसे राजभाषा की संज्ञा दी जाती है। सामान्यतः देश के बहुसंख्यक लोगों द्वारा प्रयुक्त भाषा को राजभाषा के रूप में स्वीकृति दी जाती है। इससे देश के जन सामान्य और प्रशासकों के मध्य सहज संवाद सरल होता है। इस प्रकार देश की राष्ट्रभाषा को ही राजभाषा पद पर प्रतिष्ठित किया जाता है।

14 सितम्बर, 1949 को हिंदी भारत संघ के राजभाषा-पद पर प्रतिष्ठित की गई। भारतीय संविधान के अनुच्छेद 343 से 351 तक देश में हिंदी प्रयोग को दिशा देने के लिए नियम निर्धारित किए गए हैं। भारतीय संविधान में स्पष्ट रूप से उल्लेख किया गया है, **"भारत संघ की राजभाषा हिंदी और लिपि देवनागरी होगी।"** आगे यह भी संकेत किया गया है कि राजकीय कार्यों में नागरी का अंतरराष्ट्रीय रूप ही प्रयुक्त होगा अर्थात् नागरी के मूल चिह्नों के स्थान पर नागरी के अंतरराष्ट्रीय चिह्न ही प्रयुक्त होंगे।

राजभाषा हिंदी के प्रयोग को दिशा और गति देने के लिए योजनाएँ बनाई गईं। हिंदी कार्यान्वयन के लिए देश को तीन मुख्य वर्गों में विभक्त किया गया–

1. क वर्ग–इसमें हिंदी भाषा क्षेत्र के प्रदेशों को रखा गया; यथा–उत्तर प्रदेश, मध्य प्रदेश, बिहार, राजस्थान आदि। वर्तमान समय के हरियाणा, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड, झारखंड आदि इसी क्षेत्र में आते हैं।

2. ख वर्ग–इसमें उन भाषा-क्षेत्रों को स्थान दिया गया है जिन क्षेत्रों की भाषाओं की प्रवृत्तियाँ हिंदी से पर्याप्त मेल खाती हैं। ये भाषाभाषी एक दूसरे की भाषा को पर्याप्त रूप में समझ सकते हैं। इस वर्ग के मुख्य प्रदेश हैं–पंजाब, गुजरात, महाराष्ट्र, केंद्रशासित प्रदेश आदि।

3. ग वर्ग–इस वर्ग में दक्षिण के उन भाषाभाषी प्रदेशों को रखा गया है, जिन क्षेत्रों के भाषाभाषियों और हिंदी भाषाभाषियों में अपनी भाषा के आधार पर आपस में संवाद कठिन होता है। इस वर्ग में बंगाल, असम, उड़ीसा, कर्नाटक, केरल, तमिलनाडु और आंध्र प्रदेश आते हैं। इन प्रदेशों में बंगला, असमी, उड़िया, कन्नड़, मलयालम, तमिल और तेलुगु भाषाओं

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

का प्रयोग होता है।

अनुच्छेद 343 में स्पष्ट किया गया है कि 15 वर्षों तक हिंदी के साथ अंग्रेज़ी का प्रयोग होता रहेगा। राष्ट्रपति की समीक्षा पर हिंदी प्रयोग सुनिश्चित होगा।

अनुच्छेद 344 में राष्ट्रपति को पाँच वर्ष बाद आयोग गठित कर राजभाषा की दिशा-निर्धारित करनी होगी।

अनुच्छेद 345 से 347 में विभिन्न राज्यों की प्रादेशिक भाषाओं और हिंदी को साथ-साथ गतिशील रखने की दिशा दी गई है।

अनुच्छेद 348 में न्यायालयों में हिंदी प्रयोग की योजना है। यहाँ प्रावधान है कि जब तक संसद विधि द्वारा उपबंध न करे, तब तक कार्य अंग्रेज़ी में होगा।

अनुच्छेद 349 के अनुसार संसद के किसी सदन से पारित राजभाषा संबंधित विधेयक को राष्ट्रपति की स्वीकृति अनिवार्य होगी।

अनुच्छेद 350 के अनुसार कोई भी व्यक्ति अपनी समस्या को संघ अथवा राज्य के पदाधिकारी के सामने मान्य भाषा में रख सकता है।

अनुच्छेद 351 में संविधान की अष्टम सूची में स्थान प्राप्त भाषाओं को महत्त्व दिया गया है। भारतीय सामाजिक-सांस्कृतिक अभिव्यक्ति संदर्भ में हिंदी के प्रचार-प्रसार के निर्देश हैं। इसी में हिंदी की शब्दावली को समृद्ध करने हेतु संस्कृत के साथ अन्य भाषाओं के शब्दों को ग्रहण करने का संकेत है।

संविधान के प्रारंभिक निर्देशानुसार 15 वर्षों में ही भारत के राज-काज में हिंदी को गति मिल जानी थी, किंतु आज भी हिंदी प्रयोग की स्थिति विचारणीय है।

4. राष्ट्रभाषा (National Language)—किसी देश या राष्ट्र में बहुसंख्यक लोगों द्वारा समझी और प्रयोग की जानेवाली भाषा को राष्ट्रभाषा की संज्ञा दी जाती है। देश के विभिन्न क्षेत्रों और प्रदेशों के लोग व्यावहारिक संदर्भ में इस भाषा का ही प्रयोग करते हैं। भारत की राष्ट्रभाषा हिंदी है। आधुनिक भारतीय आर्य भाषाओं के उद्‌भव काल से हिंदी भारत की राष्ट्रभाषा रही है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मध्यकालीन भारतीय आर्य भाषाओं की अंतिम कड़ी अपभ्रंश की प्रमुख सात शाखाओं में से शौरसेनी, अर्ध मागधी और खस से विकसित पश्चिमी हिंदी, राजस्थानी, पूर्वी हिंदी और पहाड़ी हिंदी के ही रूप हैं। इसके साथ मागधी से विकसित बिहारी भी हिंदी का एक प्रभावी रूप है।

भौगोलिक दृष्टि से उत्तर प्रदेश, बिहार, झारखंड, मध्य प्रदेश, हरियाणा, राजस्थान, हिमाचल प्रदेश, उत्तराखंड और दिल्ली हिंदी भाषी प्रदेश हैं। इन प्रदेशों के विभिन्न क्षेत्रों में प्रयुक्त सहज भावाभिव्यक्ति की बोलियाँ हिंदी राष्ट्रभाषा की प्रमुख आधारभूमि हैं। इस प्रकार विस्तृत भौगोलिक क्षेत्र में प्रयुक्त राष्ट्रभाषा हिंदी के स्वरूप की विविधता स्वतः स्पष्ट होती है।

भारतीय संविधान में हिंदी के राष्ट्रभाषा होने का कहीं उल्लेख नहीं है। भारतीय संविधान में हिंदी को राजभाषा का पद दिया गया है। शासन-प्रशासन, कार्यपालिका और न्यायपालिका में प्रयुक्त होने वाली हिंदी राजभाषा है। राजकाज में प्रयुक्त होनेवाली हिंदी भी राष्ट्रभाषा का एक विशेष अंग है। राष्ट्रभाषा के इस राजभाषायी स्वरूप के प्रचार-प्रसार के लिए संविधान में योजनाएँ हैं। सरकार और विभिन्न संस्थाएँ भी इस कार्य में लगी हैं।

साहित्य समाज का दर्पण ही नहीं, दीपक भी है। हिंदी साहित्य का समृद्ध इतिहास है। वीरगाथा काल से आधुनिक काल के वर्तमान चरण तक रचित साहित्य राष्ट्रभाषा हिंदी की धरोहर है। हिंदी काव्य के साथ गद्य में विकसित होती नवीन विधाएँ राष्ट्रभाषा हिंदी के सतत विकास की प्रतीक हैं।

भारत का इतिहास इस तथ्य का साक्षी है कि भारत पर चाहे मुसलमानों का शासन था, चाहे अंग्रेज़ों का, यहाँ भारतीयों के दिलों को जोड़नेवाली, राष्ट्रीय चेतना भरने वाली भाषा हिंदी ही रही है। उत्तर भारत से दक्षिण भारत तक देश को एक सूत्र में बाँधने की भूमिका हिंदी ही करती रही है। मुहम्मद तुगलक के समय में दक्खिनी हिंदी की सरलता और सरसता को मीराँजी शम्सुल उश्शाक़ ने सहजता से तुलनात्मक रूप में लिखा है–

"वे अरवी बोल न जाने
ना फारसी पछाने।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

. यूँ देखत हिंदी बोल,

पनमानी है नपतोल ॥"

दक्षिण में लोगों को एक सूत्र में बाँधने की भूमिका के संदर्भ में काज़ी महमूद बहरी ने अपनी रचना 'मन-लगन' में लिखा है–

"हिंदी तो जबान है हमारी
कहने न लगे हमन कूँ भारी।"

राष्ट्रभाषा का वह रूप सर्वाधिक उल्लेखनीय है जो हिंदीतर क्षेत्र में वहाँ की भाषा के साथ घुल मिल कर भावाभिव्यक्ति का साधन बनता है; जैसे–मुंबई की 'मुंबइया हिंदी' कोलकाता की 'कोलकतिया हिंदी' और पंजाब की 'पंजाबी-हिंदी'। ऐसी मिश्रित भाषा का रूप अत्यन्त मनमोहक होता है। ऐसे में राष्ट्रभाषा का परम लचीला और सहगामी रूप सामने आता है। बहुभाषी देश भारत में राष्ट्रभाषा का यह रूप सर्वाधिक अभिनंदनीय है।

राष्ट्रभाषा के स्वरूप के विषय में सर्वाधिक उल्लेखनीय बात यह है कि इसके स्वरूप का व्याकरणसम्मत होना अनिवार्य नहीं है। इसका अर्थ यह नहीं है कि राष्ट्रभाषा हिंदी का व्याकरणसम्मत रूप ही नहीं है। राष्ट्रभाषा के साहित्यिक और राजभाषाई आदि रूप व्याकरणसम्मत होते हैं, तो विभिन्न बोलियों, उपबोलियों, अन्य भाषाओं के साथ मिलकर प्रयुक्त–मुंबइया, कोलकतिया हिंदी आदि में अभिव्यक्ति की सहजता को महत्त्व दिया जाता है। यहाँ व्याकरण की अपेक्षा नहीं होती है।

इस प्रकार राष्ट्रभाषा आदि काल से ही पूरे भारत को एक सूत्र में बाँधे हुए है, तो संपर्क भाषा की भूमिका में अभिव्यक्ति का आधार बनी हुई है।

1.2. भाषा की प्रकृति

भाषा के सहज गुण-धर्म को भाषा की प्रकृति कहते हैं। इसे ही भाषा की विशेषता या लक्षण कह सकते हैं। भाषा-प्रकृति को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं। भाषा की प्रथम प्रकृति वह है जो सभी भाषाओं के लिए

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मान्य होती है; इसे भाषा की सर्वमान्य प्रकृति कह सकते हैं। द्वितीय प्रकृति वह है जो भाषा विशेष में पाई जाती है। इससे एक भाषा से दूसरी भाषा की भिन्नता स्पष्ट होती है। हम इसे विशिष्ट भाषागत प्रकृति कह सकते हैं।

यहाँ मुख्यतः ऐसी प्रकृति के विषय में विचार किया जा रहा है, जो विश्व की समस्त भाषाओं में पाई जाती है—

1. भाषा सामाजिक संपत्ति है : सामाजिक व्यवहार भाषा का मुख्य उद्देश्य है। हम भाषा के सहारे अकेले में सोचते या चिंतन करते हैं, किंतु वह भाषा इस सामान्य यादृच्छिक ध्वनि-प्रतीकों पर आधारित भाषा से भिन्न होती है। भाषा आद्योपांत समाज से संबंधित होती है। भाषा का विकास और अर्जन समाज में होता है और उसका प्रयोग भी समाज में ही होता है। यह तथ्य द्रष्टव्य है कि जो बच्चा जिस समाज में पैदा होता तथा पलता है, वह उसी समाज की भाषा सीखता है।

2. भाषा पैतृक संपत्ति नहीं है : कुछ लोगों का कथन है कि पुत्र की पैतृक संपत्ति (घर, धन, बाग आदि) के समान भाषा की भी प्राप्ति होती है। अतः उनके अनुसार भाषा पैतृक संपत्ति है, किंतु यह सत्य नहीं है। यदि किसी भारतीय बच्चे को एक-दो वर्ष की अवस्था (शिशु-काल) में किसी विदेशी भाषा-भाषी के साथ कर दिया जाए, तो वह उनकी ही भाषा बोलेगा। इसी प्रकार यदि विदेशी भाषा-भाषी परिवार के शिशु का हिंदीभाषी परिवार में पालन-पोषण करें, तो वह सहज रूप में हिंदी भाषा ही सीखेगा और बोलेगा। यदि भाषा पैतृक संपत्ति होती, तो वह बालक बोलने के योग्य होने पर अपने माता-पिता की ही भाषा बोलता, किंतु ऐसा नहीं होता है।

3. भाषा व्यक्तिगत संपत्ति नहीं है : भाषा सामाजिक संपत्ति है। भाषा का निर्माण भी समाज के द्वारा होता है। कोई भी साहित्यकार या भाषा-प्रेमी भाषा में एक शब्द जोड़ या उसमें से एक शब्द भी घटा नहीं सकता है। इससे स्पष्ट होता है कि कोई साहित्यकार या भाषा-प्रेमी भाषा का निर्माता नहीं हो सकता है। भाषा में होने वाला परिवर्तन व्यक्तिकृत न होकर समाजकृत होता है।

4. भाषा अर्जित संपत्ति है : भाषा परंपरा से प्राप्त संपत्ति है, किंतु

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

यह पैतृक संपत्ति की भाँति नहीं प्राप्त होती है। मनुष्य को भाषा सीखने के लिए प्रयास करना पड़ता है। प्रयास के अभाव में विदेशी और अपने देश की भाषा ही नहीं, मातृभाषा का भी ज्ञान असम्भव है। भाषा-ज्ञानार्जन का सतत प्रयास उसमें गंभीरता और परिपक्वता लाता है। निश्चय ही भाषा-ज्ञान प्रयत्नज है और प्रयत्न की दिशा और गति के अनुसार भाषा-ज्ञान शिथिल अथवा व्यवस्थित होता है। मनुष्य अपनी मातृभाषा के समान प्रयत्न कर अन्य भाषाओं को भी प्रयोगार्थ सीखता हैं। इससे स्पष्ट होता है, भाषा अर्जित संपत्ति है।

5. भाषा व्यवहार-अनुकरण द्वारा अर्जित होती है : शिशु बौद्धिक विकास के साथ अपने आस-पास के लोगों की ध्वनियों के अनुकरण के आधार पर उन्हीं के समान प्रयोग करने का प्रयत्न करता है। प्रारंभ में वह प, अ, ब आदि ध्वनियों का अनुकरण करता है, फिर सामान्य शब्दों को अपना लेता है। यह अनुकरण तभी संभव होता है जब उसे सीखने योग्य व्यावहारिक वातावरण प्राप्त हो। वैसे व्याकरण, कोश आदि से भी भाषा सीखी जा सकती हैं, किंतु व्यावहारिक आधार पर सीखी गई भाषा सर्वाधिक प्रभावी होती है। यदि किसी शिशु को निर्जन स्थान पर छोड़ दिया जाए, तो वह बोल भी नहीं पाएगा, क्योंकि व्यवहार के अभाव में उसे भाषा का ज्ञान नहीं हो पाएगा। हिंदी-व्यवहार के क्षेत्र में पलने वाला शिशु यदि अनुकरण आधार पर हिंदी सीखता है, तो पंजाबी-व्यवहार के क्षेत्र का शिशु पंजाबी ही सीखता है।

6. भाषा सामाजिक स्तर पर आधारित होती है : भाषा का सामाजिक स्तर पर भेद हो जाता है। विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त किसी भी भाषा की आपसी भिन्नता देख सकते हैं। सामान्य रूप में सभी हिंदी भाषा-भाषी हिंदी का ही प्रयोग करते हैं, किंतु विभिन्न क्षेत्रों की हिंदी में पर्याप्त भिन्नता होती है। यह भिन्नता उनकी शैक्षिक, आर्थिक, व्यावसायिक तथा सामाजिक आदि स्तरों के कारण होती है। शिक्षित व्यक्ति जितना सतर्क रहकर भाषा का प्रयोग करता है, सामान्य अथवा अशिक्षित व्यक्ति उतनी सतर्कता से भाषा का प्रयोग नहीं कर सकता है। यह स्तरीय तथ्य किसी भी भाषा के विभिन्न कालों के भाषा-प्रयोग से भी अनुभव कर सकते हैं। गाँव की

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भाषा शिथिल-व्याकरणसम्मत होती है, तो शहर की भाषा का व्याकरणसम्मत होना स्वाभाविक है।

7. भाषा सर्वव्यापक है : यह सर्वमान्य तथ्य है कि विश्व के समस्त कार्यों का संपादन प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से भाषा के माध्यम से होता है। समस्त ज्ञान भाषा पर आधारित है। व्यक्ति-व्यक्ति का संबंध या समाज-व्यक्ति का संबंध भाषा के अभाव में असंभव है। भतृहरि ने वाक्यपदीय में इस तथ्य को स्पष्ट करते हुए कहा है–

न सोऽस्ति प्रत्ययो लोके यः शब्दानुगमादृते।
अनुविद्धमिव ज्ञानं सर्वं शब्देन भासते।

(वाक्यपदीय 123-24)

मनुष्य के मनन, चिंतन तथा भावाभिव्यक्ति का मूल माध्यम भाषा है, यह भी भाषा की सर्वव्यापकता का प्रबल प्रमाण है।

8. भाषा सतत प्रवाहमयी है : मनुष्य के साथ भाषा सतत गतिशील रहती है। भाषा की उपमा प्रवाहमान जलस्रोत नदी से दी जा सकती है, जो पर्वत से निकलकर समुद्र तक लगातार बढ़ती रहती है, अपने मार्ग में वह कहीं सूखती नहीं है। समाज के साथ भाषा का आरंभ हुआ और आज तक गतिशील है। मानव समाज जब तक रहेगा तब तक भाषा का स्थायित्व पूर्ण निश्चित है। किसी व्यक्ति या समाज के द्वारा भाषा में अल्पाधिक परिवर्तन किया जा सकता है, किंतु उसे समाप्त करने की किसी में शक्ति नहीं होती है। भाषा की परिवर्तनशीलता को व्यक्ति या समाज द्वारा रोका नहीं जा सकता है।

9. भाषा संप्रेषण मूलतः वाचिक है : भाव-संप्रेषण सांकेतिक, आंगिक, लिखित और यांत्रिक आदि रूपों में होता है, किंतु इनकी कुछ सीमाएँ हैं अर्थात् इन सभी माध्यमों के द्वारा पूर्ण भावाभिव्यक्ति संभव नहीं है। स्पर्श तथा संकेत भाषा तो निश्चित रूप से अपूर्ण हैं, साथ ही लिखित भाषा से भी वाचिक भाषा के समान प्रभावी भावाभिव्यक्ति संभव नहीं है। वाचिक भाषा में आरोह-अवरोह तथा विभिन्न भाव-भंगिमाओं के आधार पर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सर्वाधिक सशक्त भावाभिव्यक्ति संभव होती है। वाचिक भाषा का प्रयोग सर्वाधिक रूप में होता है। अनेक अनपढ़ व्यक्ति लिखित भाषा से अनभिज्ञ होते हैं, किंतु वाचिक भाषा का सहज, स्वाभाविक तथा आकर्षक प्रयोग करते हैं।

10. भाषा चिरपरिवर्तनशील है : संसार की सभी वस्तुओं के समान भाषा भी परिवर्तनशील है। किसी भी देश के एक काल की भाषा परवर्ती काल में पूर्ववत नहीं रह सकती, उसमें कुछ न कुछ परिवर्तन अवश्य हो जाता है। यह परिवर्तन अनुकूल या प्रतिकूल परिस्थितियों के कारण होता है। संस्कृत में 'साहस' शब्द का अर्थ अनुचित या अनैतिक कार्य के लिए उत्साह दिखाना था, तो हिंदी में यह शब्द अच्छे कार्य में उत्साह दिखाने के अर्थ में प्रयुक्त होता है। भाषा अनुकरण के माध्यम से सीखी जाती है। मूल (वाचिक) भाषा का पूर्ण अनुकरण संभव नहीं है। इसके कारण हैं—अनुकरण की अपूर्णता, शारीरिक तथा मानसिक भिन्नता एवं भौगोलिक, सामाजिक तथा सांस्कृतिक परिस्थितियों की भिन्नता। इन्हीं आधारों पर भाषा में उच्चारण लेखन और अर्थ आदि में प्रतिपल परिवर्तन होता रहता है।

11. भाषा का प्रारंभिक रूप उच्चरित है : भाषा के दो रूप मुख्य हैं—मौखिक तथा लिखित। इनमें भाषा का प्रारंभिक रूप मौखिक है। लिपि का विकास तो भाषा जन्म के पर्याप्त समय बाद हुआ है। लिखित भाषा में ध्वनियों का ही अंकन किया जाता है। इस प्रकार कह सकते हैं कि ध्वन्यात्मक भाषा के अभाव में लिपि की कल्पना भी असंभव है। उच्चरित भाषा के लिए लिपि आवश्यक माध्यम नहीं है। इसका सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि आज भी ऐसे अनगिनत व्यक्ति मिल जाएँगे जो उच्चरित भाषा का सुंदर प्रयोग करते हैं, किंतु उन्हें लिपि का ज्ञान नहीं होता है। इस प्रकार स्पष्ट है कि भाषा का प्रारंभिक रूप उच्चरित या मौखिक है और उसका परवर्ती-विकसित रूप लिखित है।

12. भाषा का आरंभ वाक्य से हुआ है : सामान्यतः भाव या विचार पूर्णता के द्योतक होते हैं। पूर्ण भाव की अभिव्यक्ति सार्थक, स्वतंत्र और पूर्ण सार्थक इकाई-वाक्य से ही संभव है। कभी-कभी तो एक शब्द से भी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पूर्ण अर्थ का बोध होता है; यथा—'जाओ', 'आओ' आदि। वास्तव में ये शब्द न होकर वाक्य के एक विशेष रूप में प्रयुक्ति हैं। ऐसे वाक्यों में वाक्यांश छिपा होता है। यहाँ पर वाक्य का उद्देश्य-अंश 'तुम' छिपा है। श्रोता ऐसे वाक्यों को सुनकर प्रसंग-आधार पर व्याकरणिक ढंग से उसकी पूर्ति कर लेता है। इस प्रकार ये वाक्य बन जाते हैं—'तुम आओ।' 'तुम जाओ।' बच्चा एक ध्वनि या वर्ण के माध्यम से भाव प्रकट करता है। बच्चे की ध्वनि भाव से संबंधित होने के कारण एक सीमा में पूर्ण वाक्य के प्रतीक रूप में होती है; यथा—'प' से भाव निकलता है—''मुझे प्यास लगी है या मुझे दूध दे दो या मुझे पानी दे दो।'' यहाँ 'खग जाने खग की भाषा' का सिद्धांत अवश्य लागू होता है। जिसके हृदय में ममता और वात्सल्य का भाव होगा वह ही ऐसे वाक्यों की अर्थ-अभिव्यक्ति को ग्रहण कर सकेगा। प्रसंग के ज्ञान के बिना पूर्ण अर्थ-ग्रहण संभव नहीं होता है।

13. भाषा मानकीकरण पर आधारित होती है : भाषा परिवर्तनशील है। यही कारण है कि प्रत्येक भाषा एक युग के पश्चात दूसरे युग में पहुँचकर पर्याप्त भिन्न हो जाती है। इस प्रकार परिवर्तन के कारण भाषा में विविधता आ जाती है। यदि भाषा-परिवर्तन पर बिलकुल ही नियंत्रण न रखा जाए, तो तीव्रगति के परिवर्तन के परिणामस्वरूप कुछ ही दिनों में भाषा का रूप अबोध्य हो जाएगा। भाषा-परिवर्तन पूर्ण रूप से रोका तो नहीं जा सकता, किंतु भाषा में बोधगम्यता बनाए रखने के लिए उसके परिवर्तन-क्रम का स्थिरीकरण अवश्य संभव है। इस प्रकार की स्थिरता से भाषा का मानकीकरण हो जाता है।

14. भाषा का अंतिम रूप नहीं है : वस्तु बनते-बनते एक अवस्था में पूर्ण हो जाती है, तो उसका अंतिम रूप निश्चित हो जाता है। भाषा के विषय में यह बात सत्य नहीं है। भाषा चिरपरिवर्तनशील है। इसलिए किसी भी भाषा का अंतिम रूप प्राप्त कर पाना असंभव है। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि यह प्रकृति जीवित भाषा के संदर्भ में ही मिलती है।

15. भाषा का प्रवाह कठिनता से सरलता की ओर होता है : विभिन्न भाषाओं के ऐतिहासिक अध्ययन के पश्चात यह स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि भाषा का प्रवाह कठिनता से सरलता की ओर होता है। मनुष्य

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्वभावतः अल्प परिश्रम से अधिक कार्य करना चाहता है। इसी आधार पर किया गया प्रयत्न भाषा में सरलता का गुण भर देता है। इस प्रकृति का उदाहरण द्रष्टव्य है—डॉक्टर साहब > डाक्टर साहब > डॉक्ट साहब > डाक्ट साब > डाक साब > डाक्साब।

16. भाषा नैसर्गिक क्रिया है : मातृभाषा सहज रूप में अनुकरण के माध्यम से सीखी जाती है। अन्य भाषाएँ भी बौद्धिक प्रयत्न से सीखी जाती हैं। दोनों प्रकार की भाषाओं के सीखने में अंतर यह है कि मातृभाषा तब सीखी जाती है जब बुद्धि अविकसित होती है, अर्थात् बुद्धि-विकास के साथ मातृभाषा सीखी जाती है। इससे ही इस संदर्भ में होने वाले परिश्रम का ज्ञान नहीं होता है। जब हम अन्य भाषा सीखते हैं, तो बुद्धि-विकसित होने के कारण श्रम-अनुभव होता है। कोई भी भाषा सीख लेने के बाद उसका प्रयोग बिना किसी कठिनाई के किया जा सकता है। जिस प्रकार शारीरिक चेष्टाएँ स्वाभाविक रूप से होती हैं, ठीक उसी प्रकार भाषा-ज्ञान के पश्चात, उसका भी प्रयोग सहज-स्वाभाविक रूप में होता है।

17. भाषा की निश्चित सीमाएँ हैं : प्रत्येक भाषा की अपनी भौगोलिक सीमा होती है, अर्थात् एक निश्चित दूरी तक एक भाषा का प्रयोग होता है। भाषा-प्रयोग के विषय में यह कहावत प्रचलित है—"चार कोस पर पानी बदले, आठ कोस पर बानी।" एक भाषा से अन्य भाषा की भिन्नता कम या अधिक हो सकती है, किंतु सीमा प्रारंभ हो जाती है; यथा—असमी भाषा असम-सीमा तक प्रयुक्त होती है, उसके बाद बंगला की सीमा शुरू हो जाती है। प्रत्येक भाषा की अपनी ऐतिहासिक सीमा होती है। एक निश्चित समय तक भाषा प्रयुक्त होती है, उससे पूर्ववर्ती तथा परवर्ती भाषा उससे भिन्न होती है। संस्कृत, पाली, प्राकृत, अपभ्रंश तथा हिंदी के निश्चित प्रयोग-समय से यह तथ्य सुस्पष्ट हो जाता है।

1.3 भाषा की व्याकरणीय व्यवस्था

भाषा को व्यवस्था प्रदान करने वाले शास्त्र को व्याकरण कहते हैं। व्याकरण के माध्यम से भाषा के शुद्ध लेखन और उच्चारण का ज्ञान होता है। व्याकरण के अनुशासनात्मक आधार को व्याकरणिक कोटियाँ कहते हैं। प्रत्येक भाषा का अपना व्याकरण होता है। इसलिए सभी भाषाओं की व्याकरणिक कोटियों

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में भिन्नता होना स्वाभाविक है। भाषा को व्यवस्था देने के लिए व्याकरण में समय, परिस्थिति और भाषाई अपेक्षा के अनुसार परिवर्तन संभावित होता है।

व्याकरण के आधारों अर्थात् व्याकरणिक कोटियों की कुछ प्रमुख विशेषताएँ उल्लेखनीय हैं–

1. प्रत्येक भाषा के व्याकरण के आधारों अर्थात् व्याकरणिक कोटियों की अपनी विशेषताएँ होती हैं अर्थात् एक भाषा की व्याकरणिक कोटियाँ किसी भी अन्य भाषा की व्याकरणिक कोटियों से अल्पाधिक रूप में भिन्न अवश्य होंगी।
2. सभी भाषाओं के व्याकरण की कोटियाँ समय, परिस्थिति और आवश्यकतानुसार परिवर्तित होती रहती हैं।
3. भाषा की प्रवृत्ति के ही अनुसार व्याकरणिक कोटियों का निर्धारण किया जाता है; यथा–अंग्रेज़ी में चार लिंगों, संस्कृत में तीन लिंगों और हिंदी में दो लिंगों की व्यवस्था है। इसी आधार पर संबंधित भाषा का विश्लेषण किया जाता है।

भाषा को व्यवस्था देने वाले प्रमुख व्याकरणिक आधार हैं–लिंग, वचन, पुरुष, काल और कारक।

1. लिंग (Gender)

लिंग का शाब्दिक अर्थ है–चिह्न या प्रतीक। वह माध्यम जिससे किसी की पहचान की जा सके, उसे लिंग कहते हैं।

लिंग भेद

लिंग-विचार हेतु दो आधार बनाए जा सकते हैं–प्रथम प्राकृतिक लिंग, द्वितीय व्याकरणिक लिंग।

प्राकृतिक लिंग–विधाता की सृष्टि में लिंग का निर्धारण विशेष आधारों पर किया जाता है। जिन प्राणियों में कोमलता, लज्जाशीलता, शांतिप्रियता का रूप और भाव होता है, शारीरिक लघुता होती है, उन्हें स्त्रीलिंग वर्ग में रखते हैं। इसके विपरीत कठोर, पौरुषेय, शक्तिशाली और

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

शारीरिक दीर्घता अपेक्षाकृत विशालता-संदर्भ को पुल्लिंग वर्ग में स्थान दिया जाता है।

भाषा में लिंग-निर्धारण इसके विपरीत प्रयोग आधार पर किया जाता है। सभी भाषाओं में लिंग-निर्धारण की प्रक्रिया और उनकी संख्या अलग-अलग हो सकती है। एक ही भाषा में एक ही वस्तु के लिए प्रयुक्त विभिन्न नामों के लिंगों में भिन्नता हो सकती है; संस्कृत में स्त्री, नारी और भार्या शब्द स्त्रीलिंग हैं। इनका पर्यायी शब्द 'दार' (पत्नी) पुल्लिंग है, तो 'कलम' नपुंसक लिंग है।

संख्या की दृष्टि से विचार करें, तो अंग्रेज़ी में Masculine, Feminine, Neuter, common चार लिंग (Gender) हैं। संस्कृत में पुल्लिंग, स्त्रीलिंग और नपुंसक तीन लिंग हैं, तो हिंदी में सरलीकृत रूप में मात्र पुल्लिंग और स्त्रीलिंग की व्यवस्था है।

हिंदी में लिंग की अभिव्यक्ति मुख्यतः क्रिया से होती है। सामान्यतः किसी शब्द के लिंग के ज्ञान के लिए उसे वाक्य में प्रयोग कर उसके क्रिया पद से कर लेते हैं; यथा—कलम गिर गई। 'ऐनक टूट गया।' दोनों वाक्यों के 'गिर गई' और 'टूट गया' पदों से 'कलम' और 'ऐनक' के क्रमशः स्त्रीलिंग और पुल्लिंग शब्द होने का बोध होता है।

कभी-कभी कारक चिह्नों से भी शब्दों के लिंग का निश्चय किया जाता है; यथा—'उसकी कलम है।' 'उसका ऐनक है।' दोनों वाक्यों के 'उसकी' पद के 'की' और 'उसका' पद के 'का' कारक चिह्नों से 'कलम' और 'ऐनक' शब्द के क्रमशः स्त्रीलिंग और पुल्लिंग होने का बोध होता है।

हिंदी में पुल्लिंग शब्द को मूल मानते हैं, और प्रायः इसी में प्रत्यय लगाकर स्त्रीलिंग शब्द बनाए जाते हैं। हिंदी के पुल्लिंग शब्दों से स्त्रीलिंग शब्द निर्माण के कुछ प्रमुख प्रत्ययों का योग इस प्रकार होता है—

आ—अनुज>अनुजा, छात्र>छात्रा, बाल>बाला शिष्य>शिष्या।

आनी—चौधरी>चौधरानी, जेठ>जेठानी, देवर>देवरानी, नौकर>नौकरानी।

आइन—ओझा>ओझाइन, ठाकुर>ठकुराइन, पंडित>पंडिताइन।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इका–अध्यापक > अध्यापिका, गायक > गायिका, नायक > नायिका, बालक > बालिका।

इन–नाग>नागिन, नाती>नातिन, ग्वाल>ग्वालिन, मालिक>मालकिन।

इनी–अभिमानी > अभिमानिनी, तपस्वी > तपस्विनी, स्वामी > स्वामिनी, हाथी > हथिनी

इया–कुत्ता > कुतिया, गुड्डा > गुड़िया, चूहा > चुहिया, बूढ़ा > बुढ़िया, बेटा > बिटिया

ई–गधा > गधी, घोड़ा > घोड़ी, चाचा > चाची, पुत्र > पुत्री, बेटा > बेटी, लड़का > लड़की।

नी–ऊँट>ऊँटनी, भील>भीलनी, मोर>मोरनी, शेर>शेरनी।

कुछ भाषाओं में पुल्लिंग और स्त्रीलिंग के लिए स्वतंत्र शब्दों के प्रयोग होते हैं; यह हिंदी वह के लिए संस्कृत में पुल्लिंग-स्त्रीलिंग में क्रमशः 'सः' 'सा' तो अंग्रेज़ी में 'He' और 'She' शब्दों के प्रयोग होते हैं।

2. वचन (Number)

वचन व्याकरण का संख्यासूचक शब्द है। शब्द के जिस रूप में एक अथवा एकाधिक होने का बोध हो उसे वचन कहते हैं। जिनकी गणना या गिनती संभव हो, उनके संदर्भ में वचन की योजना होती है।

हिंदी में दो वचनों की व्यवस्था है–एकवचन और बहुवचन। एक वचन में एक व्यक्ति या वस्तु का बोध होता है, तो बहुवचन में दो अथवा दो से अधिक व्यक्तियों या वस्तुओं का बोध होता है।

संस्कृत व्याकरण में एकवचन, द्विवचन और बहुवचन–तीन वचनों की व्यवस्था है; यथा–

बालकः (एक बालक), बालकौ (दो बालक), बालकाः (कई बालक)

हिंदी में सरलीकृत एकवचन और बहुवचन की योजना होती है। एकवचन शब्दों को मूल रूप में स्वीकार करते हैं। इनमें प्रायः वचन प्रत्यय का प्रयोग कर बहुवचन रूप बना लिया जाता है। हिंदी में एकवचन से बहुवचन रचना के कुछ प्रमुख प्रत्यय उद्धरणीय हैं–

- जब 'आँ' वचन प्रत्यय का प्रयोग होता है, तो मूल शब्द 'ई' स्वर बदल कर 'इ' हो जाता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आँ–कली>कलियाँ, कुर्सी>कुर्सियाँ, गली>गलियाँ, नदी>नदियाँ, नारी>नारियाँ, बेटी>बेटियाँ, लड़की>लड़कियाँ, स्त्री>स्त्रियाँ।

- जब 'ए' वचन प्रत्यय का योग होता है, तो मूल शब्द का अंतिम स्वर 'आ' बदल कर 'ए' हो जाता है।
  ए–कपड़ा > कपड़े, कमरा > कमरे, गधा > गधे, घोड़ा > घोड़े, पैसा > पैसे, बच्चा > बच्चे, रुपया >रुपये, लड़का > लड़के।
- एँ–आँख>आँखें, कलम>कलमें, किताब>किताबें, पुस्तक> पुस्तकें, बात>बातें, बोतल>बोतलें, रात>रातें, सड़क>सड़कें।
- इयाँ–कापी > कापियाँ, क्यारी > क्यारियाँ, चिड़िया > चिड़ियाँ, धोती > धोतियाँ, नदी > नदियाँ, नारी > नारियाँ, लड़की > लड़कियाँ, स्त्री > स्त्रियाँ।
- ओं–कलम>कलमों, किताब>किताबों, कुत्ता>कुत्तों, गधा>गधों, घर>घरों, घोड़ा>घोड़ों, पुस्तक>पुस्तकों, लड़का>लड़कों।
  - हिंदी के कुछ शब्द सदा एकवचन में ही प्रयुक्त होते हैं, यथा–आक्रोश, जल, आग, प्रेम, भय आदि।
  - हिंदी के कुछ शब्द सदा बहुवचन रूप में प्रयुक्त होते हैं; यथा–केश, दर्शन, प्राण, लोग, प्रजा, होश आदि।
  - हिंदी में कुछ शब्दों को बहुवचन बनाने के लिए एकवचन शब्द के साथ गण, वृंद, कुल, वर्ग, जन आदि का प्रयोग किया जाता है; यथा–शिक्षकगण, पक्षीवृंद, खगकुल, कर्मचारी वर्ग, विद्वज्जन।
  - आदर या सम्मान देने के संदर्भ में सदा बहुवचन का प्रयोग किया जाता है; यथा–
    पिता जी आ रहे हैं।
    गुरु जी व्याकरण पढ़ा रहे हैं।
  - हिंदी में संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण और क्रिया शब्दों के वचन में परिवर्तन संभावित होता है; यथा–
    संज्ञा; लड़का > लड़के, **सर्वनाम**–मैं > हम,
    विशेषण–अच्छा > अच्छे, **क्रिया**–जाता है > जाते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

3. पुरुष

संवाद या भावाभिव्यक्ति के समय व्यक्ति की स्थिति को पुरुष की संज्ञा दी जाती है। भाषा में पुरुष की कल्पना दो या दो से अधिक व्यक्तियों के संवाद या भावाभिव्यक्ति के संदर्भ से की गई है। ऐसे में मुख्यतः तीन पक्ष—वक्ता, श्रोता और अन्य जिसके विषय में चर्चा हो, होते हैं। इसी आधार पर हिंदी में उत्तम, मध्यम और अन्य पुरुषों की व्यवस्था की गई है।

संस्कृत की पुरुष नामावली और व्यवस्था कुछ भिन्न है। इसमें प्रथम, पुरुष, मध्यम पुरुष और उत्तम पुरुष की क्रमशः व्यवस्था है—

प्रथम पुरुष—वह (सः) (तौ) वे दो, (ते) वे सब।

मध्यम पुरुष—तुम (त्वम्), तुम दो (युवाम्) तुम सब (यूयम्)

उत्तम पुरुष मैं (अहम्) हम दो (आवाम्) हम सब (वयम्)

- संस्कृत में ईश्वर को प्रथम पुरुष की संज्ञा दी गई है। इसलिए ईश्वर को (उसे) प्रथम पुरुष में स्थान दिया गया है। सामने स्थित श्रोता को द्वितीय स्थान और अपने सन्दर्भ के उत्तम पुरुष को अंत में रखा गया है।

आधुनिक भाषा हिंदी में अपने को सर्वोपरि रखने के लिए उत्तम पुरुष सर्वप्रथम, सामने स्थित श्रोता को द्वितीय, दूर स्थित या चर्चा के आधार पर अन्य समझ अन्य पुरुष में व्यवस्थित किया गया है।

उत्तम पुरुष—मैं, हम

मध्यम—तू, तुम, आप, तुम सब, आप सब

अन्य पुरुष—वह, वे

हिंदी में वाक्य रचना के समय पुरुष के अनुसार क्रिया पद में परिवर्तन किया जाता है। व्याकरण के नियमानुसार क्रिया के पुरुष-अनुरूपण के समय वचन, काल और लिंग की भी अन्विति अनिवार्य होती है।

'जाना' क्रिया में पुरुष-अनुरूपण अवलोकनीय है—

उत्तम पुरुष एकवचन पुल्लिंग :	मैं जाता था।	(भूत काल)
	मैं जाता हूँ।	(वर्तमान क़ाल)
	मैं जाऊँगा।	(भविष्यत् काल)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उत्तम पुरुष एकवचन स्त्रीलिंग—मैं जाती थी। (भूत काल)
मैं जाती हूँ। (वर्तमान काल)
मैं जाऊँगी। (भविष्यत् काल)
उत्तम पुरुष बहुवचन पुल्लिंग—हम जाते थे। (भूत काल)
हम जाते हैं। (वर्तमान काल)
हम जाएँगे। (भविष्यत् काल)
उत्तम पुरुष बहुवचन स्त्रीलिंग—हम जाती थीं। (भूत काल)
हम जाती हैं। (वर्तमान काल)
हम जाएँगी। (भविष्यत् काल)

इसी प्रकार मध्यम पुरुष और अन्य पुरुष के अनुरूप क्रिया का अनुरूपण किया जाता है; यथा—

मध्यम पुरुष, एकवचन, पुल्लिंग, वर्तमान काल—तुम पढ़ रहे हो।
अन्य पुरुष, बहुवचन, स्त्रीलिंग, भविष्यत् काल—वे पढ़ रही होंगी।

4. काल (Tense)

व्याकरण में समय की सूचक कोटि को काल कहते हैं। समय भौतिक इकाई है, तो काल मानसिक चिंतन-आधार पर निर्धारित व्याकरणिक इकाई है।

सभी भाषाओं में काल के मुख्यतः तीन भेद किए जाते हैं—भूत काल, वर्तमान काल और भविष्यत् काल। इन तीनों कालों का निर्धारण किसी कार्य के पूर्व की स्थिति, कार्य की वर्तमान स्थिति और आने वाली बाद की स्थिति के आधार पर करते हैं।

भाषा में काल का प्रभाव संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण पर न होकर क्रिया पर होता है। काल के आधार पर क्रिया में होने वाले परिवर्तनों को इस प्रकार रेखांकित कर सकते हैं—

भूतकाल (Past tense)—किसी क्रिया के घटित होने के पूर्व की स्थिति को भूतकाल कहते हैं : वह पढ़ रहा था। तुम सो रहे थे।

भूतकाल में क्रिया पद के समापिका क्रिया में—था, थे, थी चिह्नों

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

को देख सकते हैं। यदा-कदा आई, और ए के भी प्रयोग मिलते हैं।

हिंदी में कार्य की पूर्व स्थिति के आधार पर क्रिया को सामान्य भूत, आसन्न भूत, पूर्ण भूत, अपूर्ण भूत, संदिग्ध भूत, और हेतु-हेतु मद् भूत छः वर्गों में विभक्त करते हैं।

वर्तमान काल–किसी कार्य के होने के समय को वर्तमान काल कहा जाता है; यथा–वह पढ़ता है। तुम गा रहे हो।

वर्तमान काल की समापिका क्रियाएँ हैं : है, हैं, हूँ, हो।

हिंदी में वर्तमान काल को सामान्य वर्तमान, अपूर्ण वर्तमान और संदिग्ध वर्तमान के आधार पर अध्ययन करते हैं।

भविष्यत् काल–भविष्य में होने वाले कार्य को भविष्यत् काल कहते हैं; यथा–वह कल आएगी। मैं कुछ देर में जाऊँगा।

भविष्यत् काल की समापिका क्रिया में गा, गी, गे चिह्नों का योग होता है।

भविष्यत् काल को सामान्य भविष्यत् और संभाव्य भविष्यत् वर्गों में विभक्त करते हैं।

हिंदी में कालद्योतक चिह्नों के आधार पर क्रिया शब्दों से विभिन्न कालों के क्रिया पदों की योजना की जाती है; यथा–'पढ़ना' क्रिया से विभिन्न कालों के पदों की रचना इस प्रकार बनाई जा सकती है–

भूतकाल–उसने पुस्तक पढ़ी। उसने पुस्तक पढ़ी है। उसने पुस्तक पढ़ ली। वह पुस्तक पढ़ रहा था। उसने पुस्तक पढ़ी होगी।

वर्तमान काल–वह पुस्तक पढ़ता है। वह पुस्तक पढ़ रहा है। वह पुस्तक पढ़ रही है।

भविष्यत काल–वह पुस्तक पढ़ेगा। जब तुम कल उसके घर जाओगे तो वह पुस्तक पढ़ रहा होगा।

कभी-कभी विशेष भावाभिव्यक्ति के लिए काल-सिद्धांत के विपरीत भी प्रयोग किए जाते हैं : यथा–माली पौधों को प्रतिदिन सींचता है। इस वाक्य से माली द्वारा भूतकाल में पौधों को सींचने, वर्तमान में सींचते रहने के साथ भविष्य में भी सींचते रहने का भाव प्रकट होता है। यह वाक्य वर्तमान काल का लगता है, मगर है काल-निरपेक्ष। यदा-कदा भविष्यत्

Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

काल के लिए भूतकालिक क्रिया का प्रयोग किया जाता है; यथा–आप पाँच मिनट रुकिए, मैं आया। यहाँ 'आया' भूतकालिक क्रिया है, किंतु प्रयोग बिना समय लगाए शीघ्र आने वाले भविष्य की सूचक क्रिया बन गई है।

इसी प्रकार भविष्यत् काल के विशेष भाव-द्योतन के लिए वर्तमान काल का प्रयोग किया जाता है; यथा–दिल्ली से चण्डीगढ़ के लिए प्रस्थान करते समय एक व्यक्ति अपने निकट भविष्य में पहुँचने की सूचना देता है–दोस्त! मैं तुम्हारे घर पहुँच रहा हूँ।

ऐसे चमत्कारिक प्रयोग विशेष भावाभिव्यक्ति के लिए किए जाते हैं।

कारक (Case)

क्रिया के निष्पादक को कारक कहते हैं। डॉ. बाबू राम सक्सेना के अनुसार, "कारक का अर्थ है ऐसी वस्तु, जिसका क्रिया के संपादन में उपयोग हो।" दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि क्रिया का संपादन जिससे हो, उसे कारक की संज्ञा दी जाती है; यथा–

"महारानी लक्ष्मीबाई राजमहल से निकल कर, घोड़े पर सवार होकर तलवार से दुश्मनों का सिर काटते हुए युद्ध करती रहीं।" यहाँ युद्ध संपादन में जिनका सहयोग लिया गया है, वे कारक हैं। युद्ध राजमहल से निकल कर लड़ा गया। इसलिए **राजमहल** कारक है। घोड़े पर सवार होकर युद्ध किया इसलिए **घोड़ा** कारक है। तलवार से लड़ी इसलिए **तलवार** कारक है। दुश्मनों से युद्ध हुआ, इसलिए **दुश्मन** कारक है।

विभिन्न भाषा वैज्ञानिक और वैयाकरण कारक की संख्या पर एक मत नहीं हैं। कुछ विद्वानों ने कर्ता, कर्म, करण और अधिकरण चार कारकों को ही मान्यता दी है, तो कुछ छह, सात या आठ कारक मानते हैं।

कारक व्याकरणिक कोटि है। इन्हीं कारकों के व्यवहार में विभक्तियाँ आती हैं। विभिन्न विभक्तियों के भिन्न-भिन्न संबंध तत्त्व होते हैं। विभक्ति-चिह्नों को परसर्ग भी कहते हैं। अधिकांश विद्वान इन हिंदी कारकों और उनके विभक्ति चिह्नों को इस प्रकार रेखांकित कर सकते हैं–

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कारक		विभक्ति चिह्न
1. कर्त्ता (क्रिया का संपादक)	–	ने या चिह्न विहीन
2. कर्म (जिस पर क्रिया का प्रभाव पड़ता है)	–	को
3. करण (क्रिया का संपादन जिसकी सहायता से हो)	–	से, के द्वारा
4. संप्रदान (क्रिया जिसके लिए हो)	–	के लिए, को, के हेतु
5. अपादान (जिससे अलग होने, निकले का भाव व्यक्त हो)	–	से (पृथकता सचूक)
6. अधिकरण (जिस स्थान पर किया हो)	–	में, पर
कुछ विद्वानों ने दो अन्य कारकों को भी मान्यता प्रदान की है–		
7. संबंध (क्रिया के संचालन का आधार)	–	का के की, ना, ने नी, रा रे री
8. संबोधन (संज्ञा का संबोधक पद)	–	हे, अरे, रे, री

1.4. भाषा-अध्ययन की दिशाएँ

भाषा-अध्ययन का क्रम प्राचीन काल से चला आ रहा है। वर्तमान युग में प्रत्येक क्षेत्र की उन्नति के साथ भाषा-अध्ययन में भी अपूर्व उन्नति हुई है। इसका मुख्य कारण है कि किसी भी देश की उन्नति में उस देश की भाषा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। भाषा-अध्ययन को मुख्य रूप से निम्नलिखित वर्गों में रख कर अध्ययन कर सकते हैं।

1. वर्णनात्मक भाषा-अध्ययन : किसी भाषा के काल विशेष के स्वरूप के विश्लेषण को वर्णनात्मक भाषा-अध्ययन कहते हैं। इस अध्ययन में भाषा के जिन तत्त्वों का अध्ययन किया जाता है, उनका संबंध एक काल विशेष से ही होता है। इसमें भाषा की एक इकाई, कुछ इकाइयों या समस्त इकाइयों

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

का विवेचन और विश्लेषण हो सकता है। इनमें न तो भाषा का विकास दिखाया जाता है और न ही तुलनात्मक अध्ययन किया जाता है। प्राचीन काल में पाणिनि ने संस्कृत भाषा का ऐसा ही अध्ययन प्रस्तुत किया है। इस अध्ययन-शृंखला में आधुनिक भाषाविज्ञान के संदर्भ में 'फर्दिना दॉ सस्यूर' का नाम विशेष उल्लेखनीय है। ऐसा अध्ययन ऐतिहासिक भाषा-अध्ययन के लिए बहुत उपयोगी है। विभिन्न कालों के वर्णनात्मक भाषा-अध्ययन को कालक्रम में व्यवस्थित कर देने पर ऐतिहासिक भाषा-अध्ययन बन जाता है। वर्णनात्मक भाषा-अध्ययन की प्रक्रिया को समझने के लिए शतरंज के खेल का उदाहरण ले सकते हैं। हम शतरंज के खेल में सामने आई स्थिति पर ही चिंतन करते हुए चाल चलते हैं। वहाँ यह नहीं सोचते हैं कि कौन-कौन सी मुहरें किस-किस स्थान से चल कर उस स्थिति में पहुँची हैं। यदि किसी भाषा का वर्णनात्मक अध्ययन करना चाहें, तो भाषा की विभिन्न इकाइयों के आधार पर आदिकाल, मध्यकाल या आधुनिक काल की भाषा पर विचार कर सकते हैं। किसी भी भाषा की एक काल की विशेषताएँ दूसरे काल की विशेषताओं से निश्चय ही भिन्न होती हैं।

2. ऐतिहासिक भाषा-अध्ययन : इसे कालक्रमिक भाषा-अध्ययन भी कहते हैं। जिस प्रकार किसी परिवार की वंशावली बनाकर उससे संबंधित कई पुश्तों के अध्ययन से उसका विकास निश्चित कर लेते हैं, उसी प्रकार भाषा के ऐतिहासिक अध्ययन के अंतर्गत विभिन्न कालों की एक भाषा के क्रमबद्ध विकास का अध्ययन करते हैं। भाषा-परिवार का अध्ययन निश्चय ही भाषा के ऐतिहासिक अध्ययन की देन है। विश्व की समस्त भाषाओं में भारोपीय एक प्रमुख भाषा-परिवार है। इसके अंतर्गत भारत तथा यूरोप की भाषाएँ आती हैं। इस परिवार की समस्त भाषाए विकास प्रक्रिया में भी पर्याप्त समानता रखती हैं। इस परिवार का निर्धारण इससे संबंधित सभी भाषाओं के उत्तम, मध्यम, अन्य पुरुष, शब्दों में प्रत्यय योग; धातुओं से शब्दनिष्पत्ति; वचन, लिंग, काल तथा कारक आदि की समानता के आधार पर किया गया है। भाषा के ऐतिहासिक अध्ययन में लिखित सामग्री की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। ऐतिहासिक भाषा-विकास का एक उदाहरण द्रष्टव्य है—

वैदिक संस्कृत > लौकिक संस्कृत > पाली > प्राकृत > अपभ्रंश > हिंदी।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

3. तुलनात्मक भाषा-अध्ययन : संसार में प्रत्येक वस्तु की अच्छाई या श्रेष्ठता तुलनात्मक होती है। भाषाविज्ञान में तुलनात्मक भाषा-अध्ययन का विशेष महत्त्व है। भाषा-अध्ययन की इस पद्धति में एक परिवार की दो या दो से अधिक भाषाओं का विभिन्न दृष्टिकोणों से विश्लेषण करते हैं। भाषा का तुलनात्मक अध्ययन भाषा की किसी इकाई, साहित्य की विधा, धारा या रचना पर आधारित हो सकता है। इस प्रकार के अध्ययन से जहाँ भाषाई समता और विषमता का ज्ञान होता है, वहीं अनेक सैद्धांतिक तथ्य भी उभर कर सामने आते हैं। तुलनात्मक भाषा-अध्ययन से भाषा के गुण-दोष भी प्रकट हो जाते हैं। देवनागरी तथा रोमन लिपियों की तुलना करने के पश्चात देवनागरी की लेखन-पठन संबंधी सरलता का ज्ञान होता है—

Kamala—कमल, कमला, कमाल, कामल, कामला, कामाल, कमाला, कामाला।

देवनागरी में तीन अक्षरों से बने आठ शब्दों का लेखन-पठन सरल है, किन्तु रोमन के सामान्य लिपि-चिह्नों द्वारा इनका स्पष्ट लेखन-पठन सम्भव नहीं है।

4. सांख्यकीय भाषा-अध्ययन : भाषा-अध्ययन की यह पद्धति गणना पर आधारित है। इसमें किसी साहित्यकार, नेता, विद्वान के द्वारा प्रयुक्त या उनकी किसी कृति विशेष में प्रयुक्त स्वनों, शब्दों, वाक्यों आदि की गणना करते हुए उस पर अध्ययन किया जाता है। इस पद्धति से यह तथ्य भी निकालने का प्रयत्न रहता है कि किस कृति विशेष में किस साहित्यकार के द्वारा किस स्वर, शब्द या वाक्य का सर्वाधिक प्रयोग किया गया है। इस प्रकार भाषा की किसी इकाई के विशेष प्रतिनिधि के बहुल या सर्वाधिक प्रयोग के कारण भी सामने आ जाते हैं। भाषा के इस अध्ययन से भाषा, साहित्य और व्यक्ति-कोश का निर्माण भी संभव होता है। वर्तमान भाषा-अध्ययन में विभिन्न कोशों का विशेष महत्त्व है।

5. मनोभाषा-अध्ययन : वर्तमान युग में मनोभाषा-अध्ययन एक नवीन एवं महत्त्वपूर्ण दिशा है, जिसमें किसी व्यक्ति विशेष की भाषा के आधार पर उसकी मनःस्थिति का अध्ययन किया जाता है। मनुष्य शिक्षित

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

हो या अशिक्षित, बालक हो या प्रौढ़, स्त्री हो या पुरुष, वह जब कुछ कहना चाहता है, तो उसके मन में भावांदोलन उठता है। यह मानसिक भावांदोलन सामान्य, तीव्र अथवा मंद किसी रूप में हो सकता है। ये भाव शब्दों के माध्यम से प्रकट होते हैं, जो हम मनोभाषा अध्ययन से जान सकते हैं। प्रत्येक मनुष्य अपने मन के अनुसार ध्वनियों, शब्दों के वाक्यों आदि का प्रयोग करता है। हम टंगी तस्वीर से टाँगने वाले के मन का भाव जान सकते हैं, क्योंकि कहा भी गया है—"A picture on the wall is the picture of mind who hangs it." इस पद्धति से किसी भी साहित्यकार या सामान्य व्यक्ति की भाषा से उसकी मानसिक स्थिति का अध्ययन किया जाता है। वर्तमान युग में बाल-विकास तथा विक्षिप्त मन-सुधार के संबंध में मनोभाषा-अध्ययन की अनूठी भूमिका है।

इस प्रकार भाषा-अध्ययन की प्रत्येक दिशा का अपना महत्त्व है। भाषा-अध्ययन के प्रारंभिक क्रम में यदि वर्णनात्मक भाषा-अध्ययन का सर्वाधिक महत्त्व है, तो विस्तृत रूप देने के लिए ऐतिहासिक भाषा-अध्ययन की अपनी विशेष भूमिका है। भाषा-अध्ययन की अन्य दिशाएँ भी भाषा के विभिन्न क्षेत्रों की विशिष्ट जानकारी देती हैं।

1.5. भाषा-अध्ययन के लक्ष्य

भाषा मानव की परम उपयोगी संपत्ति है। यह ही विचार-विमर्श और चिंतन-मनन का मुख्य माध्यम है। मानव और भाषा का संबंध अतीत काल से चला आ रहा है। यह संबंध दिन-प्रतिदिन गुरु से गुरुतर होता जा रहा है। इसका मुख्य कारण है कि भाषा मानव-समाज का अभिन्न अंग है। मानव की उन्नति में भाषा की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। अतः भाषा-शिक्षण मानव के लिए अनिवार्य है। स्वभाषा प्रयोग के समय पूर्ण सहजता तथा स्वाभाविकता होती है, जिसके कारण उसकी प्रवृत्ति-संरचना आदि की ओर ध्यान ही नहीं ज़ाता है। भाषा के व्यावहारिक प्रयोग के समय विद्वानों को भी इनकी संरचना का ज्ञान नहीं होता है, क्योंकि ऐसे समय मनुष्य भाषा की विशेष जानकारी के प्रति उदासीन रहता है।

किसी भाषा में भावाभिव्यक्ति सामान्य बात है, किंतु भाषा-अध्ययन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में सामान्य से विस्तृत और सूक्ष्मातिसूक्ष्म धारणाएँ होती हैं। भाषा-अध्ययन प्रायः व्यावहारिक (साधन) और सैद्धांतिक (साध्य) दो रूपों में किया जाता है।

(क) व्यावहारिक भाषा-अध्ययन

इसे 'साधन रूप' का भाषा-अध्ययन भी कहते हैं। मानव अपने जीवन के विभिन्न कार्यों को प्रारंभ करने और उनमें गति देने के लिए भाषा-अध्ययन करता है। मानव-जीवन के व्यक्तिगत तथा सामाजिक कार्यों में भाषा की परम सहयोगी भूमिका होती है। ऐसे में भाषा मनुष्य को गति देने में साधन के रूप में सहयोगी होती है।

1. व्यक्तिगत सफलता : मनुष्य जन्म के समय धरती पर अकेला आता है और मृत्यु पर अकेला ही जाता है। यही कारण है कि प्रत्येक व्यक्ति का अपना व्यक्तित्व होता है। भाषा व्यक्तिगत जीवन का मूलाधार है। भाषा-अभाव में मानव का जीवन-यापन दुर्लभ हो जाएगा। गूँगा गूँ, गाँ ऐसी ध्वनियों के साथ सांकेतिक भाषा के सहारे अपने भाव प्रकट करने का प्रयत्न करता है, किंतु विकसित भाषा के अभाव में उसका जीवन कष्टसाध्य होता है। शैशव काल में बच्चे को भाषा का ज्ञान नहीं होता। वह हँस और रोकर अपने भाव प्रकट करता है। शिशु के माता-पिता को भी उसके कष्ट का ज्ञान इसीलिए स्पष्ट रूप में नहीं हो पाता है। मनुष्य अपने भावों की स्पष्ट अभिव्यक्ति भाषा के ही माध्यम से करता है। पारिवारिक तथा सामाजिक संबंध भी भाषा के माध्यम से होते हैं। एक-दूसरे का संपर्क सुख तथा दुःख में एक-दूसरे का सहयोगी होना आदि गतिविधियाँ भाषा पर ही आधारित हैं। इस प्रकार व्यक्तिगत जीवन के लिए भाषा-ज्ञान और अध्ययन परमावश्यक है।

2. सामाजिक सफलता : विचारों के आदान-प्रदान से ही समाज की स्थापना हुई है। भावादान-प्रदान का माध्यम भाषा ही है। अतः भाषा को सामाजिक ज़ीवन का मूलाधार कह सकते हैं। डॉ. सरयूप्रसाद अग्रवाल ने समाज के लिए भाषा के महत्त्व को स्पष्ट करते हुए लिखा है, "भाषा वाणी द्वारा व्यक्त स्वच्छंद प्रतीकों की वह रीतिबद्ध पद्धति है जिससे मानव समाज

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

में अपने भावों का परस्पर आदान-प्रदान करते हुए एक-दूसरे को सहयोग देता है।" ब्लाक और ट्रेगर ने भी इसी प्रकार का अपना विचार व्यक्त किया है—"A language is a system of arbitrary vocal symbols by means of which a social group co-operates."

भाषा के ही माध्यम से मनुष्य समाज के विभिन्न क्षेत्रों में उन्नति करता है। समाज को दिशा देने वाली सामाजिक, धार्मिक, राजनीतिक तथा साहित्यिक गतिविधियाँ भाषा के ही माध्यम से होती हैं। जो समाज जितना ही उन्नत होगा, उसकी भाषा भी उतनी ही विकसित और उन्नत होगी। भाषा निश्चय ही सामाजिक संपत्ति है। इसके सुसहयोग से सामाजिक जीवन गतिशील रहता है।

3. ज्ञानार्जन : भाषा भाव-वहन का मुख्य माध्यम है, इसलिए साहित्यिक, धार्मिक, आर्थिक, व्यावसायिक, राजनीतिक, वैज्ञानिक आदि सभी विषयों का ज्ञानार्जन भाषा के ही माध्यम से होता है। विभिन्न विद्वानों संतों, वैज्ञानिकों आदि के विचारों को कभी आमने-सामने होने पर मौखिक रूप में सुन लेते हैं, तो कभी लिपिबद्ध रूप में प्राप्त कर लेते हैं। भाषा के अभाव में किसी प्रकार का ज्ञानार्जन असंभव है।

4. साहित्य-सृजन : जिस प्रकार लिपि के लिए भाषा की अनिवार्यता है, उसी प्रकार साहित्य के लिए भाषा अनिवार्य है। भाषा के अभाव में लिपि का ही नहीं, साहित्य का अस्तित्व संदिग्ध हो जाएगा। विस्तृत अर्थ में भाषा का लिपिबद्ध रूप ही साहित्य है। लिपि का आधार पाकर भाषा समय और स्थान की सीमा पार करने की शक्ति संजो लेती है। साहित्यकार का विचार लिपिबद्ध होकर आने वाली पीढ़ियों के लिए सुरक्षित हो जाता है। भाषा के लिपिबद्ध रूप के ही आधार पर आज विभिन्न वैज्ञानिकों, संतों, साहित्यकारों और ऋषि-मुनियों के विचार पढ़कर चिंतन-मनन किया जा सकता है। इस प्रकार साहित्य के लिए भाषाई आधार अनिवार्य है।

5. भाषा-यंत्र-निर्माण : वर्तमान वैज्ञानिक युग में यंत्र-निर्माण की प्रक्रिया दिन प्रतिदिन तीव्रतर होती जा रही है। भाषा-अध्ययन का लक्ष्य आज यंत्रों से भी संबंधित हो गया है, क्योंकि वर्तमान युग में अनेक भाषा-यंत्रों का निर्माण हो चुका है; यथा—रेडियो, टेलीविज़न, टेपरिकार्डर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आदि। ये यंत्र मूलतः भाषा की मुख्य इकाई ध्वनि पर आधारित हैं। इन यंत्रों का निर्माण तभी संभव है, जब भाषा-ध्वनि का सूक्ष्म तथा वैज्ञानिक ज्ञान प्राप्त हो।

(ख) सैद्धांतिक भाषा-अध्ययन

इसे 'साध्य रूप' का भाषा-अध्ययन भी कहते हैं। जब भाषा का अध्ययन उसकी ही प्रवृत्ति, विकास, प्रक्रिया तथा संरचना आदि को समझने के लिए किया जाता है, तो उसे भाषा का साध्य-अध्ययन कहते हैं। भाषा के साध्य-अध्ययन को ही भाषाविज्ञान (Linguistics) कहते हैं। इस प्रकार के अध्ययन करने वाले को भाषावैज्ञानिक (Linguist) कहते हैं। भाषा का साध्य-अध्ययन मुख्यतः निम्नलिखित उद्देश्यों को ध्यान में रखकर किया जाता है।

1. भाषा-विकास और ह्रास का ज्ञान : भाषा-अध्ययन के समय हम उन माध्यमों पर भी चिंतन करते हैं, जिनके आधार पर भाषा का विकास या ह्रास होता है। भाषा की विकासात्मक तथा ह्रासात्मक प्रक्रिया के अनेक उदाहरण मिल जाते हैं; यथा—भक्तिकाल में अवधी और ब्रज साहित्य-सृजन की मुख्य भाषाएँ रही हैं। तुलसीदास ने अवधी में रामचरितमानस की रचना की, तो मलिक मुहम्मद जायसी ने पद्मावत की और सूरदास ने ब्रज भाषा में सूर-सागर की रचना की है। परवर्ती काल में खड़ी-बोली का प्रचार हुआ। खड़ी-बोली की लोकप्रियता के सामने अवधी और ब्रज भाषाओं की रचना-प्रक्रिया का ह्रास हुआ है। इस प्रकार भाषा के विकास—ह्रास में सामाजिक, राजनीतिक तथा धार्मिक परिस्थितियों की विशेष भूमिका रही है, साथ ही अवधी तथा खड़ी-बोली की संरचनात्मक भिन्नता इसका मूल कारण बनी है। खड़ी-बोली की संरचना अवधी भाषा की संरचना से कहीं अधिक सरल है।

2. एकाधिक भाषा-ज्ञान : जब हम एक भाषा की संरचना का ज्ञान प्राप्त कर लेते हैं, तो भाषा-विषयक सामान्य सिद्धांत भी समझ जाते हैं। ऐसी स्थिति में अन्य किसी भी भाषा का ज्ञान सरल हो जाता है। हिंदी भाषा की संरचना का पूर्ण ज्ञान होने के पश्चात भाषा-सिद्धांत आधार पर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अन्य किसी भी भारतीय भाषा का ही नहीं विदेशी भाषा का भी सीखना सरल हो जाता है। जब हमें हिंदी ध्वनियों के स्वर और व्यंजन दो मुख्य वर्गों का ज्ञान हो जाता है, तो अन्य किसी भाषा की ध्वनियों का यह वर्गीकरण सरल होना स्वाभाविक है। इस प्रकार एक भारतीय भाषा के अध्ययन के पश्चात अन्य भारतीय भाषाओं की अध्ययन-सरलता से भारत की भाषा-समस्या का समाधान होता है। मातृभाषा के सुसंगठित ज्ञान के पश्चात विदेशी भाषा के शिक्षण से विदेशी-संपर्क भी सरल हो जाता है।

3. भाषांग-ज्ञान : भाषा-अध्ययन के मुख्य उद्देश्यों में भाषाओं का शुद्ध प्रयोग प्रमुख है। भाषा की विभिन्न ध्वनियों का उच्चारण, ध्वनि-संकेतों का शुद्ध लेखन, शब्द और वाक्य आदि के संरचनात्मक ज्ञान से उनका शुद्ध प्रयोग संभव होता है; यथा—'डॉक्टर साहब' उच्चारण मुख-सुख के आधार 'डॉक्ट साहब' या 'डॉक्साब' हो जाता है, किंतु इसे 'डॉक्टर साहब' ही लिखा जाएगा। कभी-कभी रूपया, श्रीमति, महतव आदि अशुद्ध शब्द-रूपों के प्रयोग मिल जाते हैं, किंतु भाषा-अध्ययन से इनके शुद्ध रूपों-रुपया, श्रीमती, महत्त्व आदि का ज्ञान हो जाता है। प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी क्षेत्र विशेष से जुड़ा होता है, जिसके कारण यदा-कदा क्षेत्रीय भाषा का प्रभाव उभर आता है। पूर्वी हिंदी में 'दही' और 'बाज़ार' शब्द स्त्रीलिंग हैं। उस क्षेत्र में इसका प्रयोग इस प्रकार होता है—'दही खट्टी है' 'बाज़ार खुल गई है।' इन क्षेत्रों में संबंधित व्यक्ति हिंदी भाषा-अध्ययन के पश्चात् 'दही', 'बाज़ार' शब्दों का प्रयोग पुल्लिंग रूप में ही करेंगे।

4. भाषा का भौगोलिक-ऐतिहासिक ज्ञान : भाषा-अध्ययन से विभिन्न कालों में किसी भाषा विशेष का प्रयोग-स्थान का ज्ञान प्राप्त होता है। भाषा के सहारे तत्संबंधित स्थान या देश की भौगोलिक ऐतिहासिक स्थिति और संस्कृति-सभ्यता का भी ज्ञान प्राप्त होता है। भाषा के ऐतिहासिक अध्ययन-आधार पर संस्कृत से हिंदी के विकास का ज्ञान संभव है।

5. लिपि-सुधार : प्रत्येक भाषा की कोई न कोई एक मूल लिपि होती है। भाषा को लिखित रूप प्रदान करने के लिए लिपि का सहारा लिया जाता है। लिपि के वैज्ञानिक होने पर जहाँ स्वभाषा में भावाभिव्यक्ति की स्पष्टता और सशक्तता होती है, वहीं किसी भी अन्य देशी-विदेशी भाषा

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

को अंकित किया जा सकता है। इसी आवश्यकता के पूर्ति-आधार पर लिपि के सुधार का क्रम शुरू हुआ है। वर्तमान समय के भाषा-अध्ययन में लिपि एक महत्त्वपूर्ण क्षेत्र बन गया है। हिंदी भाषा को राष्ट्र भाषा के पद पर आसीन होने का अवसर मिला है, इसलिए तत्संबंधित लिपि—नागरी की सुधार-प्रक्रिया विशेष महत्त्वपूर्ण हो गई है।

6. भाषाओं का तुलनात्मक ज्ञान : भाषा-अध्ययन से हम एक स्थान या भिन्न-भिन्न स्थानों की एक समय या भिन्न-भिन्न समय में प्रयुक्त दो भाषाओं की समता और विषमता का ज्ञान प्राप्त करते हैं। विश्व की किन्हीं दो भाषाओं में पूर्ण समानता नहीं हो सकती। ऐसे अध्ययन के अंतर्गत समकालीन या भिन्नकालीन किन्हीं दो साहित्यकारों की भाषा की समानता और भिन्नता को रेखांकित करते हैं। समकालीन कवि—पंत, प्रसाद, निराला तथा दिनकर में से किन्हीं दो अथवा दो से अधिक की भाषा का तुलनात्मक ज्ञान भाषा के अध्ययन से ही सम्भव है। इसी प्रकार भिन्नकालीन कबीर और प्रसाद की भाषा का तुलनात्मक अध्ययन कर सकते हैं।

7. भाषा-संरचना का ज्ञान : भाषा-अध्ययन का प्रमुख प्रयोजन भाषा की संरचना का ज्ञान प्राप्त करना होता है। भाषा-संरचना के अंतर्गत उनकी विभिन्न इकाइयों—ध्वनि, वर्ण, शब्द, पद, वाक्य और प्रोक्ति आदि पर विचार करते हैं। भाषा का प्रयोग अर्थाभिव्यक्ति के लिए होता है। अतः अर्थ-संरचना का भी ज्ञान भाषा-अध्ययन का मुख्य लक्ष्य माना गया है। हिंदी भाषा की ध्वनि-संरचना के अंतर्गत स्वर-ध्वनियों में अ, आ, इ आदि; व्यंजन-ध्वनियों में क्, ख्, ग्, च् त् आदि का अध्ययन किया जाता है। शब्द-संरचना के अंतर्गत मूल तथा यौगिक शब्दों पर विचार करते हैं। मूल शब्द में सार्थक खंडों की संभावना नहीं होती है, तो यौगिक के सार्थक खंड होते हैं। यौगिक शब्दों की रचना प्रायः उपसर्ग या प्रत्यय के योग से होती है। उपसर्ग तथा प्रत्यय स्वभाषा के हो सकते हैं और भिन्न भाषा के भी; यथा—

सुगंध=सु (संस्कृत-उपसर्ग) + गंध
डॉक्टरी=डॉक्टर (Doctor) + ई (हिंदी-प्रत्यय)

इसी प्रकार भाषा की अन्य इकाइयों का संरचनात्मक अध्ययन करते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भाषा-अध्ययन द्वारा उससे संबंधित अनेक विवादास्पद स्थितियाँ सुलझ जाती हैं । कभी-कभी भाषा तथा उपभाषा की सीमा संबंधी विवाद खड़ा हो जाता है। ब्रज, अवधी, हरियाणवी को हिंदी से भिन्न भाषा मानने की बात इसी प्रकार की है। इसका समाधान भाषा-अध्ययन से ही संभव है। ब्रज, अवधी और हरियाणवी आदि हिंदी भाषा की बोलियाँ हैं।

भाषा के अध्ययन के साथ हमारी दृष्टि व्यापक-उपयोगी स्तर पर जाती है। जब अपनी भाषा के साथ अन्य भाषाओं के गुण-दोष का विशद ज्ञान प्राप्त हो जाता है, तो स्वभाषा का व्यर्थ-मोह समाप्त हो जाता है। भाषा-वैज्ञानिक अध्ययन से भाषा-दोष को दूर करने का भाव अत्यंत प्रबल हो जाता है, साथ ही किसी भाषा विशेष के प्रति होने वाली अंध-भक्ति भी नहीं रह जाती है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

2

मानक हिंदी एवं उनकी बोलियाँ

2.1. मानक हिंदी का स्वरूप

मानक भाषा के पर्यायी रूप में अंग्रेज़ी का Standard Language शब्द स्वीकृति पा चुका है। जब कोई बोली व्याकरणसम्मत होकर सांस्कृतिक और राजनीतिक संरक्षण के साथ सामाजिक प्रतिष्ठा पा लेती है, तो उसे मानक भाषा का रूप मिल जाता है।

हिंदी भारत की राजभाषा, राष्ट्रभाषा और जनभाषा है। इसका प्रयोग क्षेत्र दिल्ली, उत्तर प्रदेश, उत्तराखंड, हिमाचल प्रदेश, हरियाणा, मध्य प्रदेश, राजस्थान, बिहार, झारखंड और छत्तीसगढ़ प्रदेशों तक विस्तृत है। विशाल क्षेत्र में प्रयुक्त होने के कारण उसमें विविधता है। हिंदी के प्रयोग को व्याकरणसम्मत और एक रूप बनाने के लिए मानकीक़रण किया गया है।

हिंदी के मानकीकरण की लंबी और ऐतिहासिक परंपरा है। हिंदी के शुद्ध उच्चारण और शुद्ध लेखन को महत्त्व देने से मानकीकरण का श्रीगणेश हुआ। हिंदी का प्रथम व्याकरण श्री लाल ने भाषा चंद्रोदय लिखा। व्याकरण रचना से हिंदी के मानकीकरण को गति मिली है। इस संदर्भ में केंद्रीय हिंदी निदेशालय की सराहनीय भूमिका रही है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मानक हिंदी की विशेषताएँ

1. मानक हिंदी की सर्वप्रमुख विशेषता इसकी स्वर प्रधानता है। इसी कारण वर्णमाला में स्वरों को आगे रखा गया है। स्वरों के बाद व्यंजनों को रखा जाता है; यथा–

अ, आ, इ, ई......औ।
क, ख, ग.......ह।

• व्यंजनों की आक्षरिकता से हिंदी की स्वर प्रधानता सिद्ध होती है। प्रत्येक व्यंजन के साथ 'अ' स्वर होता है : यथा–

क=क्+अ, ज=ज्+अ, प=प्+अ

• स्वरों का प्रयोग स्वतंत्र रूप में होता है और 'अ' को छोड़ कर सभी स्वरों की मात्राएँ भी प्रयुक्त होती हैं; यथा–

आम-काम (आ, म्अ–क्; आ, म्, अ)
उसको-मुझे (उ, स्, अ, क, ओ; म् उ, झ्, ए)

2. मानक हिंदी के सभी स्वर मौखिक और अनुनासिक दोनों रूपों में प्रयुक्त होते हैं; यथा–

आप (मौखिक)	आँख (अनुनासिक)
पूछना (मौखिक)	पूँछ (अनुनासिक)

3. **संयुक्त वर्ण-रचना**–मानक हिंदी के संयुक्त व्यंजन-निर्माण के कुछ आधार इस प्रकार हैं–

(क) जिन वर्णों के दाहिने खड़ी पाई हो, तो उसे हटा कर संयुक्त वर्ण बनाते हैं; यथा–

ख > ख्–ख्याति	घ > घ्–विघ्न
ग > ग्–लग्न	च > च्–कच्चा
म > म्–रम्य	श > श्–श्याम

(ख) जिन वर्णों के अंत में अर्ध पाई हो, तो उसे हटा कर संयुक्त वर्ण बनाते हैं; यथा–

क > क्–रक्त	फ > फ्–दफ्तर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(ग) जिन व्यंजनों की रचना में पाई का योगदान नहीं होता, अर्थात् जो वर्ण टेढ़े-मेढ़े या गोल होते हैं, उनके नीचे हलंत लगा कर संयुक्त वर्ण बनाते हैं; यथा–

ट–लट्टू	ड–बुड्ढा
द–विद्या	ह–चिह्न

4. स्वर और स्वर की मात्राओं के साथ अनुनासिक चिह्न 'ँ' का प्रयोग–अनुनासिक चिह्न का प्रयोग स्वर या स्वरयुक्त व्यंजन पर किया जाता है। अर्ध व्यंजन या स्वर विहीन व्यंजन पर अनुनासिकता संभव नहीं होती।

जब स्वर और स्वर की मात्रा की रचना शिरोरेखा के नीचे होती है, तो अनुनासिक का मूल रूप 'ँ' ही प्रयुक्त होता है; यथा–आँख, चाँद, पूँछ आदि।

जब मात्रा शिरोरेखा के ऊपर तक होती है, तो अनुनासिक चिह्न को अनुस्वार के समान ही प्रयोग करते है; यथा–मेँ > में, हैँ > हैं, कुत्तोँ > कुत्तों आदि।

5. ह्रस्व और दीर्घ मात्राओं का प्रयोग––हिंदी स्वर और उनकी मात्राओं के ह्रस्व और दीर्घ रूपों के प्रयोग की व्यवस्था है। इस व्यवस्था से भावों की प्रभावी संप्रेषणीयता और स्पष्ट अभिव्यक्ति संभव होती है; यथा–

अ–आ (ा) > तन, तना, तान, ताना
> कमल, कमला, कमाल, कामल, कामाल, कमाला, कामला, कामाला।

6. क्रिया रूप–मानक हिंदी की क्रिया धातु में 'ना' लगा कर बनाई जाती है। इस प्रकार क्रिया के अंत में 'ना' का होना मानक हिंदी की पहचान है; यथा–

हँस+ना=हँसना, जा+ना=जाना, खा+ना=खाना

7. हिंदी में अकारांत शब्द प्रायः व्यंजनांत हो जाते हैं अर्थात् लेखन में शब्दांत 'अ' व्यक्त होता है, किंतु उच्चारण में 'अ' स्वर लुप्त हो जाता

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

है। मानक हिंदी में लेखन पूर्ववत स्वरांत ही रखा जाता है; यथा–

उच्चारण	लेखन
राम्	राम
तन्	तन
कल्	कल

8. हल् चिह्न–मानक हिंदी में परंपरागत संस्कृत शब्दों में हल् चिह्न का पूर्ववत प्रयोग किया जाता है, किंतु हिंदी में हल चिह्न का प्रयोग बंद कर दिया गया है; यथा–महान, विद्वान।

9. ऑ चिह्न –हिंदी में अंग्रेज़ी के पर्याप्त शब्दों का प्रयोग होता है। अंग्रेज़ी के कई शब्द ऐसे हैं, जिनके शुद्ध उच्चारण या लेखन के लिए 'ऑ' का प्रयोग करना होता है; यथा–कॉलेज, डॉक्टर, बॉल आदि।

मानक हिंदी में इस रूप को अपना लिया गया है।

10. य श्रुति–हिंदी स्वर प्रधान भाषा है। जिन शब्दों में य श्रुति क्षीण हो जाए, वहाँ स्वरात्मक रूप ही अपनाना चाहिए; यथा–नई, लिए, मिठाई, आइए, जाइए।

संज्ञा शब्दों के बहुवचन बनाते समय भी स्वरात्मक रूप ही अपनाया जाता है; यथा–लताएँ, बाधाएँ, समस्याएँ।

11. विभक्ति चिह्न–मानक हिंदी में संज्ञा शब्दों के साथ प्रयुक्त होनेवाले विभक्ति चिह्न अलग लिखे जाते हैं; यथा–अशोक ने, राजीव को, प्रभात से, वरुण के लिए, अरुण का और विनय में आदि।

12. क्रिया पद–मानक हिंदी की क्रिया पद की मूल, सहायक और समापिका क्रियाएँ स्वतंत्र शिरोरेखा में अलग-अलग लिखी जाती हैं; यथा–

वह गया।	वह जा रहा है।
वह जाता है।	वह चला जा रहा है।

13. संख्यावाचक शब्द–मानक हिंदी में संख्यावाचक शब्दों की वर्तनी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भी सुनिश्चित कर दी गई है। संख्यावाचक शब्दों के इसी स्वरूप को अपनाना चाहिए; यथा–

एक दो तीन चार पाँच छह सात आठ नौ दस ग्यारह बारह तेरह चौदह पंद्रह सोलह सत्रह अठारह उन्नीस बीस इक्कीस बाईस तेईस चौबीस ...सौ।

2.2. हिंदी की उपभाषाएँ एवं बोलियाँ

भारत का उत्तर और मध्य क्षेत्र बहुत समय पहले से हिंदी-क्षेत्र नाम से जाना जाता है। हिंदी प्रयोग-क्षेत्र के विस्तृत होने के कारण अध्ययन सुविधा के लिए उसे विविध वर्गों में विभक्त किया गया है। **जॉर्ज इब्राहीम ग्रियर्सन** ने हिंदी के मुख्य दो उपवर्ग बनाए हैं–1. पश्चिमी हिंदी 2. पूर्वी हिंदी। उन्होंने बिहारी को अलग भाषा के रूप में व्यवस्थित किया है।

हिंदी भाषा के ऐतिहासिक और स्रोत-आधार पर अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि अपभ्रंश की शौरसेनी, अर्धमागधी, मागधी और खस शाखाओं से हिंदी का विकास विविध क्षेत्रों में हुआ है। इसे मुख्यतः पाँच उपवर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

1. पश्चिमी हिंदी 2. पूर्वी हिंदी 3. बिहारी हिंदी 4. राजस्थानी हिंदी 5. पहाड़ी हिंदी।

मध्य काल में मुहम्मद तुगलक के समय में भारत के दक्षिण में विकसित होनेवाली हिंदी–'दक्खिनी हिंदी' नाम से जानी जाती है।

2.2.1. पश्चिमी हिंदी की बोलियाँ

इसका विकास शौरसेनी अपभ्रंश से हुआ है। पश्चिमी हिंदी का क्षेत्र उत्तर भारत में मध्य भारत के कुछ अंश तक फैला है। अर्थात् उत्तराखंड क्षेत्र के हरिद्वार, हरियाणा से लेकर उत्तर प्रदेश के कानपुर के पश्चिमी भाग तक है। आगरा से लेकर मध्य क्षेत्र ग्वालियर और भोपाल तक है। क्षेत्र-विस्तार के कारण पश्चिमी हिंदी में पर्याप्त विविधता दिखाई देती है। इसमें मुख्यतः पाँच बोलियों के रूप मिलते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

1. कौरवी

प्राचीनकाल में इस क्षेत्र को कुरु प्रदेश कहते थे। इसी आधार पर नाम कौरवी पड़ा है। इसे पहले खड़ी-बोली भी नाम दिया जाता था। अब खड़ी-बोली हिंदी का पर्याय रूप है। खड़ी-बोली नामकरण के विषय में कुछ विद्वानों का मत है कि खड़ेपन (खरेपन) शुद्धता के आधार पर है, तो कुछ भाषाविदों का कहना है कि खड़ी-पाई (आ की मात्रा 'ा') के प्रयोग (आना, खाना, चलना, हँसना) आधार पर खड़ी-बोली नाम पड़ा है।

वर्तमान समय में इसका प्रयोग दिल्ली, मेरठ, मुजफ्फरनगर, मुरादाबाद, रामपुर, विजनौर, सहारनपुर (उ. प्र.); हरिद्वार, देहरादून (उत्तरांचल), यमुना नगर, करनाल, पानीपत (हरियाणा का यमुना तटीय भाग) में होता है।

कौरवी की विशेषताएँ

1. क्रिया रूप आकारांत होता है; यथा—आना, खाना, दौड़ना, हँसना, फैलना और सींचना आदि।
2. कर्ता परसर्ग 'ने' का प्रयोग स्पष्ट रूप में होता है।
3. कहीं-कहीं पर 'न' के स्थान पर 'ण' ध्वनि का प्रयोग मिलता है।
4. इसमें तत्सम और तद्भव शब्दों की बहुलता है।
5. अरबी और फारसी के शब्द यत्र-तत्र मिलते हैं।
6. वर्तमान में अंग्रेज़ी शब्दों को भी प्रभावी स्थान मिल गया है।

वर्तमान हिंदी का स्वरूप इसी बोली को आधार मानकर विकसित हुआ है। हिंदी को राजभाषा, राष्ट्रभाषा और जनभाषा का रूप देने में इस बोली की विशेष भूमिका है।

(ख) ब्रजभाषा

ब्रजभाषा की उत्पत्ति शौरसेनी अपभ्रंश से हुई है। हिंदी साहित्य के मध्यकाल अर्थात् भक्ति और रीतिकाल में इस भाषा में पर्याप्त साहित्य

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

रचा गया है। उस काल में अवधी और ब्रज में ही मुख्यतः रचना होती थी। रीतिकाल में ब्रजभाषा ही रचना की आधार भाषा थी। इसीलिए इसे ही हिंदी के रूप में स्वीकृति मिली थी। विशेष महत्त्व मिलने के कारण ही 'ब्रज बोली' कहना अनुकूल नहीं लगता वरन् 'ब्रजभाषा' कहना अच्छा लगता है।

''मैया मैं नहिं माखन खायौ।
भोर भए गैयन के पाछे, मधुबन मोहि पठायौ॥''

इसका केंद्र स्थल आगरा और मथुरा है। वैसे इसका प्रयोग अलीगढ़ और धौलपुर तक होता है। हरियाणा के गुड़गाँव और फरीदाबाद के कुछ अंश और मध्य प्रदेश के भरतपुर और ग्वालियर के कुछ भाग में ब्रज का प्रयोग होता है।

ब्रजभाषा की कुछ विशेषताएँ उल्लेखनीय हैं–

1. पद-रचना में ओकार और औकार बहुला रूप है; जैसे–
   खाया > खायौ > गया > गयो या गयौ
2. बहुवचन में 'न' का प्रयोग होता है; यथा–लोग > लोगन; बात > बातन
3. 'उ' विपर्यय रूप मिलता है; जैसे–कुछ > कछु।
4. संबंध कारकों के विशेष रूप मिलते हैं–
   मेरो, तेरो, हमरो, तिहारो आदि।
5. तद्भव शब्दों की बहुलता है।
6. वर्तमान समय में अरबी, फारसी, तुर्की के साथ अंग्रेज़ी शब्द भी पर्याप्त रूप में प्रयुक्त होते हैं।

ब्रज भाषा के प्रमुख कवि हैं–सूरदास, नंददास, कृष्णदास, केशव, बिहारी, रसखान और घनानंद आदि।

हिंदी भाषा और साहित्य के विकास में ब्रज की बलवती भूमिका रही है।

3–हरियाणवी–इसे बाँगरू और हरियानी नाम भी दिए गए हैं, किंतु अब हरियाणवी ही सर्वप्रचलित और मान्य नाम हो गया है। 'हरियाणा'

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

प्रदेश का उद्भव भी 'हरियाणवी' बोली के आधार पर हुआ है। हरियाणवी और कौरवी बोली में पर्याप्त समानता है। पूरे प्रदेश में हरियाणवी का सहज रूप में प्रयोग मिलता है। हरियाणा प्रदेश के चारों ओर उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, पंजाब, राजस्थान और दिल्ली की सीमाएँ हैं। हरियाणा की विभिन्न सीमाओं से लगे प्रदेशों में हरियाणा से भिन्न बोलियों या भाषाओं का प्रयोग होता है। हरियाणा की बोली सीमावर्ती बोलियों और भाषाओं से प्रबलता से प्रभावित है। उत्तर प्रदेश की ब्रज और कौरवी, राजस्थान की राजस्थानी और पंजाब की पंजाबी का प्रभाव स्पष्ट रूप में देख सकते हैं। हरियाणवी की विविधता को दृष्टिगत कर इसके व्यवस्थित अध्ययन के लिए सात वर्ग बनाए जा सकते हैं—

केन्द्रीय हरियाणवी, ब्रज हरियाणवी, मेवाती हरियाणवी, अहीरवाटी हरियाणवी, बागड़ी हरियाणवी, कौरवी हरियाणवी, अंबालवी हरियाणवी।

हरियाणवी की सामान्य चर्चा में केंद्रीय हरियाणवी का उदाहरण सामने रखते हैं। इसका केंद्र रोहतक है। इस प्रकार कहा जा सकता है कि हरियाणवी का केंद्र रोहतक है।

हरियाणवी की प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. हरियाणवी णकार बहुला होने के कारण 'न' के स्थान पर प्रायः 'ण' का प्रयोग किया जाता है।
2. इसमें 'ल' ध्वनि के स्थान पर प्रायः 'ळ' का प्रयोग मिलता है; यथा—बालक > बाळक।
3. वाक्य-निर्माण में प्रयुक्त क्रिया 'है' के स्थान पर 'सै' का प्रयोग किया जाता है; यथा—बालक जाता है > बाळक जास्सै।
4. हरियाणवी में मुख-सुख के लिए शब्दों की ध्वनियों में लोप की विशेष भूमिका होती है; यथा—अनाज > नाज, अहीर > हीर, उठाना > ठाना।
5. इसके उच्चारण संदर्भ में यत्र-तत्र अनुनासिकता का प्रभाव दिखाई देता है; यथा—गाय > गाँय, घास > घाँस।

4. कन्नौजी—कन्नौजी नामकरण कन्नौज क्षेत्र के नाम पर हुआ है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कन्नौज इसका केंद्र है। इस बोली का प्रयोग फर्रुखाबाद, हरदोई, शाहजहाँपुर, क़ानपुर और पीलीभीत में होता है। कन्नौजी का क्षेत्र ब्रज और अवधी के मध्य में है। इस पर ब्रज का स्पष्ट प्रभाव दिखाई देता है। कन्नौजी में मात्र लोक साहित्य उपलब्ध होता है।

कन्नौजी के उच्चारण में विविधता दिखाई देती है।

1. कभी-कभी उकारांत रूप सामने आता है; यथा—आपु, कानु, खातु, घरु, सबु आदि।
2. कभी ओकारांत का प्रभावी रूप उभर आता है; यथा—बड़ो हमारो या हमाओ।
3. कन्नौजी में 'ण' ध्वनि का प्रयोग अत्यंत विरल होता है।
4. सर्वनाम में मैं, मेरो, मोरो
   हम हमरो, हमारो
   तू, तइ, तेरो, तोरो, तुम्हारो, तुमारो
   यहु, इहि, इसै, याको
5. कन्नौजी परसर्गों में मानक हिंदी के अतिरिक्त अन्य चिह्न भी प्रयुक्त होते हैं—
   कर्ता—ने, नैं
   कर्म—को, कौ, काँ
   संबंध—की, को, कर
   अधिकरण—में, माँ, महँ
6. बहुवचन बनाने के लिए कभी-कभी ब्रज भाषा के समान 'न' का प्रयोग किया जाता है; यथा—बात>बातन, घोड़ा>घोड़न।

5. बुंदेली

बुंदेलखंड में बोली जाने के कारण इसे बुंदेली नाम दिया गया है। इसे बुंदेलखंडी भी कहते हैं। इसके प्रयोग क्षेत्र में झाँसी, छतरपुर, ग्वालियर, भोपाल और जालौन का भाग आता है। इसमें अत्यल्प साहित्य, किंतु समृद्ध लोक-साहित्य है। इस क्षेत्र का आल्हा विशेष रूप में प्रसिद्ध है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

बुंदेली के चारों ओर निम्नलिखित बोलियों का प्रयोग होता है—पूर्व में बघेली, उत्तर-पूर्व में अवधी, उत्तर में कन्नौजी, ब्रजभाषा, उत्तर-पश्चिम में जयपुरी, दक्षिण पूर्व में छत्तीसगढ़ी, दक्षिण में मराठी छत्तीसगढ़ी और पश्चिम में मालवी।

बुंदेली की कुछ प्रमुख भाषाई विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. इसमें ओकार बहुला रूप दिखाई देता है; यथा—
   माथा > माथो, हूऊँगा > होउँगो, हमारा > हमारो।
2. सर्वनाम शब्दों में विविधता है; यथा—
   मैं, मो, मोरो, मेरो।
   हम, हमारो, हमाओ।
   तू, तैं, तुम, तोरो, तोओ, तोको।
3. क्रिया विशेषण रूप विशेष उल्लेखनीय हैं—यहाँ > याँ, याँई, वहाँ > वाँ, वाई, जहाँ > जाँ, ज्याँ, तहाँ > ताँ, त्याँ।
4. परसर्ग चिह्नों की नवीनता भी रेखांकन योग्य है।
   कर्ता—ने, नें, नैं
   कर्म-संप्रदान—कौ, कौं, खौ, खैं
   करण अपादान—से सें, सैं, सों
   संबंध—की, के, कौ, खी, खे खें, खौं
   अधिकरण—में, मैं, पे पै,

इससे स्पष्ट है कि पश्चिमी हिंदी का प्रयोग विस्तृत क्षेत्र में होता है। इसलिए इसमें भाषाई विविधता है।

2.2.2. पूर्वी हिंदी की बोलियाँ

पूर्वी हिंदी का उद्भव अर्ध मागधी अपभ्रंश से हुआ है। भारत में हिंदी भाषी क्षेत्र पर्याप्त विस्तृत क्षेत्र में फैला हुआ है। भारत के पश्चिम भाग में प्रयुक्त हिंदी को पश्चिमी हिंदी की संज्ञा दी गई है, तो उसके पूर्व में प्रयुक्त होने के आधार पर इसे पूर्वी हिंदी कहा जाता है। इसका प्रयोग प्राचीन कोशल राज के उत्तर और दक्षिण तक होता है। वर्तमान समय

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में इसे उत्तर प्रदेश के कानपुर, लखनऊ, गोंडा, बहराइच, फैज़ाबाद, जौनपुर, सुलतानपुर प्रतापगढ़, मिर्ज़ापुर, इलाहाबाद और मध्य प्रदेश के जबलपुर आदि ज़िलों से संबंधित मान सकते हैं। इस वर्ग की भाषा की प्रमुख विशेषता है कि इकार और उकार बहुल शब्द रूप मिलते हैं।

इसमें तीन बोलियाँ हैं—अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी।

1. **अवधी**—अवध क्षेत्र में प्रयुक्त होने के कारण इसे अवधी नाम दिया गया है। इसका केंद्र अयोध्या है। 'अवध' शब्द अयोध्या के पर्यायवाची रूप में प्रयुक्त होता है। अवधी का क्षेत्र लखनऊ, बाराबंकी, फैज़ाबाद, गोंडा, बस्ती, बहराइच, रायबरेली, प्रतापगढ़, मिर्ज़ापुर, और इलाहाबाद आदि है। भक्तिकाल में अवधी हिंदी भाषा के रूप में प्रयुक्त होती है। अवधी में जायसी, मुल्लादाउद, कुतुबन, मंझन, उसमान और तुलसीदास ने साहित्य-सृजन किया है। अवधी में समृद्ध लोक-साहित्य भी है। हिंदी की बोलियों में अवधी का विशेष महत्त्व है। अवधी के साथ बोली लगाकर 'अवधी बोली' कहना अच्छा नहीं लगता, जब कि मुँह से अवधी भाषा ही निकलता है।

अवधी की कुछ विशेषताएँ इस प्रकार हैं—

1. अवधी में 'श' के स्थान पर 'स' का प्रयोग किया जाता है; यथा—शंकर > संकर, महेश > महेस।
2. इसमें व के स्थान पर प्रायः ब का प्रयोग किया जाता है; यथा—वन > बन, विपिन > बिपिन।
   "चले बिपिन मुनि सिय संग लागी।"
3. इसमें इकार बहुला रूप मिलता है—
   "बरिसहिं नैन चुअहिं घर मा हाँ।"—जायसी
   इस वाक्य के 'बरिसंहि' और 'चुअहिं' में इकार का प्रयोग है।
4. उकार बहुला रूप मिलता है; यथा—
   सूर्य > सूरज > सुरुजु
   "भेंटहु बहुरि लखन लघु भाई।
   सोकु सनेह न हृदय समाई॥—तुलसी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

5. मुख-सुख के लिए आगम प्रक्रिया मिलती है–
स्कूल > इस्कूल, स्त्री > इस्त्री आदि।
6. सर्वनाम शब्दों में पर्याप्त विविधता दिखाई देती है–
मैं, में, मँइ, मोहि, मो
हम, हम सब, हमइँ, हमार
तू, तुइँ तुई,
तुम, तुम्ह, तू
7. परसर्ग चिह्नों में भी विविधता है–कर्ता–×
कर्म-सम्पादन–को, क, का, काँ, कइ, कऊँ
संप्रदान–कह्याँ
करण अपादान–से, सन, ते, तें
संबंध–के, का, की, कइ, कै, केरा
अधिकरण–में, पर, माँ, मँह, प

2. बघेली–बघेल राजपूतों के संदर्भ से रीवाँ के निकटवर्ती क्षेत्र को बघेलखंड कहते हैं। इसी आधार पर इसे बघेली या बघेलखंडी कहते हैं। इसका उद्भव अर्ध मागधी से हुआ है। इसका क्षेत्र मध्य प्रदेश के दमोह, जबलपुर, बालाघाट से लेकर उत्तर प्रदेश के मिर्ज़ापुर तक है। बघेली और अवधी में बहुत समानता है। इसी आधार पर कुछ विद्वान इसे अलग बोली न कहकर अवधी का दक्षिणी रूप मानते हैं।

बघेली की कुछ प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं–
1. सर्वनाम शब्दों में पर्याप्त विविधता है–
मैं > मँय, मह, म्वाँ > म्वारे, म्वार
हम > हम्ह, हम्हारे, हम्हार, हमार
तुम > तँय, त्वाँ, त्वारे, तुम्हारे
वह > वह, वहि
वे > उन्ह, ओ, उन
2. क्रिया विशेषण रूप में अवधी का रंग दिखाई देता है; यथा–
यहाँ > इहँवा, वहाँ > उहँवाँ, जहाँ > जहँवाँ, कहाँ > कहँवाँ

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

3. परसर्ग चिह्नों में भी उनकी अपनी पहचान दिखाई देती है–
कर्ता–×
कर्म संपादन–का, क, कहँ, कइ
करण अपादान–से, ले, ते, से
संबंध–के, की, कर, केर, कै
अधिकरण–पर, म, माँ

4. इसमें अत्यल्प साहित्य और समृद्ध लोक साहित्य मिलता है।

3. छत्तीसगढ़ी : छत्तीसगढ़ पहले एक क्षेत्र विशेष का नाम था, अब यह एक प्रदेश बन गया है। इस क्षेत्र विशेष के नाम पर इसे छत्तीसगढ़ी बोली नाम से संबोधित किया जाता है।

इस बोली क्षेत्र में विलासपुर, रायगढ़, खैरागढ़, रायपुर, दुर्ग आदि आते हैं। ऐतिहासिक दृष्टि से इस क्षेत्र को दंडकारण्य और गोंडवाना भी कहा जाता है। इस बोली की सीमा भोजपुरी, मगही, बघेली, मराठी, उड़िया और तेलगू बोली, भाषाओं क्षेत्रों से स्पर्श करती है। इस प्रकार इन बोलियों और भाषाओं का अल्पाधिक प्रभाव स्वाभाविक रूप से मिलता है। इसमें साहित्यिक रचना का अभाव, किंतु समृद्ध लोक-साहित्य है।

छत्तीसगढ़ी बोली की कुछ प्रमुख विशेषताएँ इस प्रकार हैं–

1. सर्वनाम शब्द अवधी और बघेली से बहुत कुछ मिलते हैं। इसके रूपों में वही विविधता दिखाई देती है–
मैं > मैं, में, मो, मोर
हम > हम, हमन, हमार, हमर्
तू > तू, तूँ, तैं, तोर्
तुम > तुम्, तुमन्, तुम्ह, तुम्हँ, तुम्हार, तुँहर, तूहर्।
वह > वो ओ
वे > वो, उन्, उन्ह,

2. इस बोली में निश्चयार्थक रूप में 'हर' का प्रयोग किया जाता है; यथा–घोड़ा का अर्थ सामान्य घोड़ा, किंतु 'घोड़ा-हर' का अर्थ है–कोई विशेष घोड़ा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

3. इस बोली में कभी अघोष ध्वनि घोष हो जाती है, तो कभी घोष ध्वनि अघोष बन जाती है; यथा–
अघोषीकरण–बन्दगी > बन्दकी, शराब >शराप।
घोषीकरण–सीता > छीता, छेना > सेना।
4. छत्तीसगढ़ी बोली में महाप्राणीकरण भी होता रहता है; यथा–
इलाका > इलाखा।
5. इस बोली के परसर्गों की विविधता इस प्रकार रेखांकित कर सकते हैं–
कर्ता–×
कर्म–को, का, ला, ल
करण–से, ले,
संप्रदान–का, ला, बार, खातर, खातिर
अपादान–से, ले
संबंध–के (दोनों लिंग, दोनों वचन)
अधिकरण–में, माँ.

इस प्रकार पूर्वी हिंदी की तीनों–अवधी, बघेली और छत्तीसगढ़ी में पर्याप्त समानता है। इनमें से अवधी में समृद्ध साहित्य और लोक साहित्य है, तो बघेली और छत्तीसगढ़ी में मात्र लोकसाहित्य है।

2.3 हरियाणवी

इसे बांगरू या हरियानी नाम भी दिया जाता है, किंतु अब हरियाणवी ही सर्वप्रचलित और मान्य हो गया है। हरियाणा प्रदेश का उद्भव और नामकरण इसी बोली के आधार पर हुआ है। हरियाणवी हरियाणा के सभी ज़िलों में बोली जाती है। हरियाणवी और कौरवी में पर्याप्त समानता है। हरियाणा की सीमा उत्तर प्रदेश, हिमाचल प्रदेश, पंजाब और राजस्थान से लगी हुई है। इस प्रकार इसके सीमावर्ती क्षेत्रों के निकट की बोली का प्रभाव स्पष्ट दिखाई देता है। इस प्रभाव के साथ हरियाणवी विशेष चर्चा हेतु इसे सात उपवर्गों में विभक्त कर सकते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(i) केंद्रीय हरियाणवी–इसका केन्द्र रोहतक है। सामान्य उदाहरण देने हेतु प्रायः इसी रूप का उल्लेख किया जाता है। 'णकार' बहुला रूप होने के कारण 'न' के स्थान पर प्रायः 'ण' का प्रयोग किया जाता है। 'ल' के स्थान पर 'ळ' विशेष ध्वनि सुनाई देती है; यथा–बालक > बाळक। क्रिया 'है' के स्थान पर 'सै' का प्रयोग होता है; यथा–बालक जाता है > बाळक जास्से।

(ii) ब्रज हरियाणवी–फरीदाबाद और मथुरा के मध्य हरियाणा के क्षेत्र में इसका प्रयोग होता है। ब्रज का रंग स्पष्ट दिखाई देता है। इसमें 'ओ' और 'औ' ध्वनियों की बहुलता है; यथा–खायौ, खायो; गयो, गयौ; नाच्यो, नाच्यौ आदि।

'ल' के स्थान पर 'र' का प्रयोग मिलता है–काला>कारा, बिजली > बिजुरी आदि।

(iii) मेवाती हरियाणवी–मेव क्षेत्र के आधार पर इसका नाम मेवाती पड़ा है। इसका केंद्र रेवाड़ी है। इसमें झज्जर, गुड़गाँव, बावल और नूह का क्षेत्र आता है। इसमें हरियाणवी, ब्रज और राजस्थानी प्रभाव दिखाई देता है। इसमें 'ण' और 'ल' ध्वनि की बहुलता है।

(iv) अहीरवाटी हरियाणवी–रेवाड़ी और महेंद्रगढ़ का क्षेत्र अहीरवाल है। इसी आधार पर इसका नामकरण हुआ है। नारनौल से कोसली तक इसका स्वरूप मिलता है। इसमें मेवाती, राजस्थानी (बागड़ी) का प्रभाव दिखाई देता है। इसमें ओकार बहुल रूप मिलता है; यथा : था > थो।

(v) बागड़ी हरियाणवी–इसका क्षेत्र हिसार और सिरसा है। भिवानी ज़िले का पर्याप्त क्षेत्र इस बोली के अंतर्गत आता है। इसमें केंद्रीय हरियाणवी और राजस्थान (बागड़ी) का मिश्रित और विकसित रूप मान सकते हैं। बहुवचन की रचना में 'आँ' प्रत्यय का योग मिलता है; यथा–बात > बाताँ। लोप का बहुल रूप सामने आता है; जैसे अहीर > हीर, अनाज > नाज, उठाना > ठाना।

(vi) कौरवी हरियाणवी–कौरवी क्षेत्र से जुड़े हरियाणा के भाग में

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

इस उपवोली का रूप मिलता है। यमुनानगर, कुरुक्षेत्र, करनाल और पानीपत के कुछ भाग में इसका प्रयोग होता है। आकारांत शब्दों का बहुल प्रयोग मिलता है; यथा—खाना, पाना, धोना, सोना आदि।

(vii) अंबालवी हरियाणवी—अंबाला इसका मुख्य केंद्र है। इस उपबोली पर पंजाबी भाषा का स्पष्ट पुट दिखाई देता है। इसमें महाप्राण ध्वनि अल्पप्राण हो जाती है—हाथ > हात, साथ > सात। लोप की बहुलता भी दिखाई देती है—कृपया > कृप्या, मिनट > मिन्ट।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

3

हिंदी स्वन, शब्द एवं हिंदी प्रसार-आंदोलन

3.1 हिंदी स्वन

3.1.1 हिंदी स्वर : परिभाषा और वर्गीकरण

1. स्वर-परिभाषा—जिन ध्वनियों के उच्चारण में किसी अन्य ध्वनि का सहयोग अपेक्षित न हो, उनका उच्चारण अबाधित हो और उच्चारण जितनी देर चाहें कर सकें, उन्हें स्वर कहते हैं; यथा—अ, आ, इ, ई आदि।

2. हिंदी स्वर : वर्गीकरण—हिंदी स्वरों को निम्नलिखित आधारों पर वर्गीकृत कर सकते हैं—

1. जीभ का कौन सा भाग करण का कार्य करता है—फेफड़े से बाहर आने वालीं निःश्वास वायु से, मुख-विवर के विभिन्न रूपों के कारण से विभिन्न ध्वनियों का उच्चारण होता है। स्वर उच्चारण-प्रक्रिया में जीभ का अग्र, मध्य अथवा पश्च भाग उठकर सहायक सिद्ध होता है। इसी आधार पर हिंदी स्वरों को तीन मुख्य वर्गों में विभक्त कर सकते हैं—

(क) अग्र स्वर—इ, ई, ए, ऐ

(ख) मध्य स्वर—अ

(ग) पश्च स्वर—उ, ऊ, ओ, औ

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

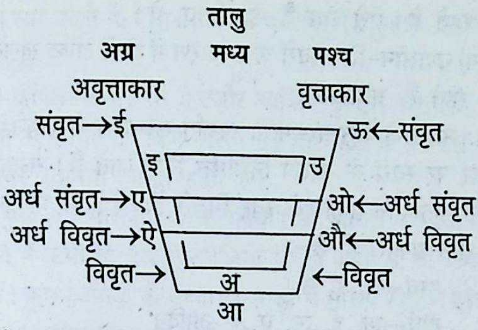

2. जीभ का व्यवहृत भाग कितना उठता है–स्वर उच्चारण में जीभ के अल्पाधिक रूप से उठने के कारण मुख की खुलने वाली स्थिति के अनुसार स्वरों का विभाजन कर सकते हैं।

(क) विवृत–जब मुख-विवर पूरा खुला हो, जीभ निश्चेष्ट पड़ी हो; यथा–आ।

(ख) अर्धविवृत–जब मुख-विवर विवृत से कम, किंतु पूरा खुला हो, जीभ एक-तिहाई उठी हो; यथा–ऐ, औ।

(ग) अर्ध संवृत–जब मुख विवर सँकरा, अर्थात् थोड़ा खुला हो, जीभ दो तिहाई उठी हो; यथा–ए, ओ।

(घ) संवृत–जब मुख-विवर अत्यन्त सँकरा या बहुत थोड़ा खुला हो, जीभ बहुत ऊपर उठी हो; यथा–इ, ई, उ, ऊ।

3. ओष्ठों की स्थिति के अनुसार–उच्चारण में ओठों की महत्त्वपूर्ण भूमिका होती है। उच्चारण हेतु निःश्वास का भीतरी नियंत्रण जीभ के द्वारा होता है, तो उसका बाहरी नियंत्रण ओठों के द्वारा होता है। ओठों की स्थिति के अनुसार स्वरों का विभाजन इस प्रकार कर सकते है–

(क) वृत्ताकार–इसे वृत्तमुखी भी कहते हैं। इन स्वरों के उच्चारण में दोनों ओष्ठ अल्पाधिक रूप में वृत्ताकार खुलते हैं। ऐसे स्वर हैं–उ, ऊ, ओ, औ।

(ख) अवृत्ताकार–इसे अवृत्तमुखी भी कहते हैं। इन स्वरों के उच्चारण में दोनों ओष्ठ खुलकर वृत्ताकार रूप नहीं धारण करते हैं वरन् लगभग

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

सामान्य रहते है। ऐसे स्वर हैं—इ, ई, ए, ऐ।

(ग) **उदासीन**—जिन स्वरों के उच्चारण में दोनों ओष्ठ खुलकर लगभग उदासीन रहते हैं; यथा—अ।

4. **मात्रा के अनुसार**—मात्रा अर्थात् उच्चारण में लगने वाले समय के आधार पर स्वरों के स्वरूप निर्धारित किए जाते हैं। संस्कृत में ह्रस्व, दीर्घ और प्लुत तीन प्रकार के स्वर मिलते हैं। हिंदी में भी इनकी संख्या मुख्यतः तीन प्रकार की है—

ह्रस्व—अ, इ, उ,
दीर्घ—आ, ई, ऊ, ए, ऐ आदि।
प्लुत—ओउ (ओउम्)

5. **कोमल तालु और अलिजिह्वा की स्थिति के अनुसार**—ये दोनों अंग कभी नासिका-विवर के मार्ग को पूरी तरह बंद कर देते हैं, जिससे हवा केवल मुख मार्ग से निकलती है। ऐसे में उच्चरित होने वाला स्वर मौखिक होता है। ये अंग कभी मध्य स्थिति में रहते हैं, जिससे वायु मुख तथा नासिका दोनों ही मार्गों से निकलती है। ऐसी ध्वनि को अनुनासिक ध्वनि कहते हैं। इस तरह स्वरों के दो वर्ग बना सकते हैं।

(क) **मौखिक**—अ, आ, ए।

(ख) **अनुनासिक**—आँ, एँ।

6. **स्वर-तंत्रियों की स्थिति के आधार पर**—विभिन्न स्वरों के उच्चारण में स्वर तंत्रियाँ भिन्न-भिन्न स्थिति धारण करती हैं। इस आधार पर भी स्वरों को वर्गीकृत कर सकते हैं। हिंदी के सभी स्वर मूलतः घोष हैं। विशेष प्रयोग-स्थिति में और कुछ अन्य भाषाओं में अघोष स्वर मिलते हैं।

(क) **घोष**—जिन स्वरों के उच्चारण में स्वर तंत्रियों के निकट आने के कारण वायु घर्षण के साथ बाहर आती है, उन्हें घोष स्वर कहते हैं। हिंदी के प्रायः सभी स्वर घोष हैं।

(ख) **अघोष**—जिनके उच्चारण के समय स्वर-तंत्रियों के एक-दूसरे से दूर होने के कारण वायु बिना घर्षण के, सरलता से बाहर आती है,

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उन्हें अघोष स्वर कहते हैं; यथा–विभिन्न बोलियों में प्रयुक्त इ, उ, ए विशिष्ट ध्वनियाँ।

(ग) **जपित**–बीमार या कमज़ोर व्यक्ति फुस्फुस करता है, तो वायु स्वर तंत्रियों से साधारण घर्षण करती हुई बाहर आती है। इस प्रकार से उच्चरित स्वर ध्वनियाँ जपित होती हैं।

7. **मुख की मांसपेशियों के खिंचाव के आधार पर**–विभिन्न स्वरों के उच्चारण में कभी तो मुख मांसपेशियाँ दृढ़ हो जाती हैं, तो कभी शिथिल हो जाती हैं। कुछ ध्वनियों के उच्चारण-समय में मांसपेशियों में हल्की दृढ़ता होती है। इस आधार पर स्वरों के शिथिल, मध्यम और दृढ़ तीन वर्ग बनाए जा सकते हैं–

(क) **शिथिल**–अ, इ, उ

(ख) **मध्यम**–ए

(ग) दृढ़–ऑ, औ

8. **संयुक्तता के आधार पर**–स्वरों के एक स्थान और एक से अधिक स्थानों के उच्चारण को ध्यान में रखकर उन्हें दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं।

(क) **मूल स्वर**–जिनके उच्चारण में जीभ एक स्थान पर रहती है; यथा–अ, आ, इ, ई आदि।

(ख) **संयुक्त स्वर**–जिनके उच्चारण में जीभ एक स्वर उच्चारण स्थान से दूसरे स्थान पर पहुँच जाती है, तो संयुक्त स्वर होते हैं; यथा–ऐ > अइ, औ > अउ।

3.1.2 हिंदी व्यंजन : परिभाषा और वर्गीकरण

1. **व्यंजन : परिभाषा**–जिन ध्वनियों के उच्चारण में स्वर का सहयोग अनिवार्य हो, निःश्वास की वायु बाधित होकर बाहर आए और उनका श्रवण क्षणिक ही संभव हो, उन्हें व्यंजन ध्वनि कहते हैं; यथा–क् च्, त्, आदि।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

2. हिंदी व्यंजनों का वर्गीकरण

स्थान / प्रयत्न	स्वर यंत्र मुखी	कण्ठ्य	तालव्य	मूर्द्धन्य	दंत्य	वर्त्स्य	दंतोष्ठ	द्वयोष्ठ्य
स्पर्श		क् ख ग् घ्		ट् ठ् ड् ढ्	त् थ् द् ध्			प् फ् ब् भ्
स्पर्श संघर्षी			च् छ् ज् झ्					
नासिक्य		ङ्	ञ्	ण्	न्			म्
पार्श्विक				ळ्		ल्		
प्रकंपी					र्			
उत्क्षिप्त				ड़् ढ़्				
संषर्षी	ह्	ख़ ग़	श्	ष्	स्	स् ज़	व् फ्	
अर्धस्वर			य्					व्

हिंदी व्यंजनों को निम्नलिखित आधारों पर वर्गीकृत किया जा सकता है—

1. स्थान-आधार

इस आधार से व्यंजनों को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त कर सकते हैं:

(क) स्वरयंत्रमुखी—जिन व्यंजनों का उच्चारण स्वरयंत्र मुख से होता हो; यथा—ह।

(ख) कण्ठ्य—जिन व्यंजनों का उच्चारण कंठ से होता है, उन्हें कंठ्य

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व्यंजन कहते हैं। इनके उच्चारण में जीभ का पश्च भाग कोमल तालु को स्पर्श करता है; जैसे—कवर्ग (क्, ख्, ग्, घ्, ङ्)।

(ग) **तालव्य**—जिनका उच्चारण जीभ की नोक या अग्रभाग के द्वारा कठोर तालु के स्पर्श से होता है; जैसे—च्, छ्, ज्, झ्, ञ, श्।

(घ) **मूर्द्धन्य**—जिन व्यंजनों का उच्चारण मूर्धा से होता है। इस प्रक्रिया में जीभ मूर्धा का स्पर्श करती है; जैसे—ट् ठ्, ड्, ढ्, ण्, ष्।

(ङ) **वर्त्स्य**—जिन ध्वनियों का उद्भव जीभ के द्वारा वर्त्स्य या ऊपरी मसूढ़े के स्पर्श से हो; यथा—न्, ल् र्।

(च) **दंत्य**—जिन व्यंजनों का उच्चारण दाँत की सहायता से होता है। इसमें जीभ की नोक ऊपरी दंत-पंक्ति का स्पर्श करती है; यथा—त्, थ्, द् ध्, न्, स्।

(झ) **ओष्ठ्य**—दोनों ओष्ठों के मिलने से उच्चरित होने वाली ध्वनि को ओष्ठ्य व्यंजन कहते हैं; यथा—प्, फ्, ब्, भ्, म्, व्।

2. प्रयत्न-आधार

इस आधार पर व्यंजनों को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त कर सकते हैं—

(क) **स्पर्श**—जिनके उच्चारण-समय में मुख के दो भिन्न अंग—दोनों ओष्ठ, नीचे का ओष्ठ और ऊपर के दाँत, जीभ की नोक और दाँत आदि एक दूसरे से स्पर्श की स्थिति में हों, वायु उनको स्पर्श करती हुई बाहर आती हों, तो उन्हें स्पर्श व्यंजन कहेंगे; यथा—क् ट् त् तथा प् वर्गों की प्रथम चार ध्वनियाँ।

(ख) **संघर्षी**—जिनके उच्चारण में मुख के दो अवयव एक दूसरे के निकट आ जाते हैं और वायु निकलने का मार्ग सँकरा हो जाता है, तो वायु घर्षण करके निकलती है, उन्हें संघर्षी कहते हैं; यथा—ख़् ग़् ज़् फ़् आदि।

(ग) **स्पर्श संघर्षी**—जिन व्यंजनों के उच्चारण में पहले स्पर्श फिर घर्षण की स्थिति हो; यथा—च्, छ्, ज्, झ्।

(घ) **नासिक्य**—जिन व्यंजनों के उच्चारण में दाँत, ओष्ठ, जीभ आदि

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

के स्पर्श के साथ वायु नासिका मार्ग से बाहर आती है, उन्हें नासिक्य व्यंजन ध्वनि कहते हैं; यथा—पाँचों वर्गों की पाँचवीं (ङ्, ञ्, ण्, न्, म्) ध्वनियाँ।

(ङ) **पार्श्विक**—जिन व्यंजनों के उच्चारण में मुख के मध्य दो अंगों के मिलने से वायु-मार्ग अवरुद्ध होने के बाद जीभ के एक या दोनों ओर से वायु बाहर आती है; उन्हें पार्श्विक ध्वनि कहते हैं; यथा—ल।

(च) **लुंठित**—जिनके उच्चारण में जीभ बेलन की भाँति लपेट खाती है; यथा—र। 'र' ध्वनि यदा-कदा साँप की जीभ की तरह विशेष कंपन कर—प्रकंपित रूप में भी प्रयुक्त होती है।

(छ) **उत्क्षिप्त**—जिनके उच्चारण में जीभ की नोक झटके से तालु को छूकर वापस आ जाती है, उन्हें उत्क्षिप्त व्यंजन कहते हैं; यथा—ड़्, ढ़्।

(ज) **अर्धस्वर**—जिन ध्वनियों का उच्चारण प्रकृति स्वर और व्यंजन के मध्य होता है, उन्हें अर्धस्वर कहते हैं। इनका उच्चारण स्वर के समान ही शुरू होता है, किंतु व्यंजन के निकट होता है। स्वरों के समान इनकी मात्रा भी नहीं होती है, इसलिए इन्हें व्यंजनों में रखते हैं; यथा—य् व्।

3. स्वरतंत्री-आधार

इस आधार पर व्यंजनों के दो वर्ग बना सकते हैं।

(क) **घोष**—जिन ध्वनियों के उच्चारण समय में स्वरतंत्रियाँ एक दूसरे के निकट होती हैं और निःश्वास की वायु निकलने से उसमें कंपन हो। प्रत्येक वर्ग की अंतिम तीन (तीसरी, चौथी, पाँचवीं) ध्वनियाँ; यथा—ग्, घ्, ङ्, ज्, झ्, ञ् आदि।

(ख) **अघोष**—जिनके उच्चारण-समय स्वर-तंत्रियों में कंपन न हो। प्रत्येक वर्ग की प्रथम दो (पहली, दूसरी) ध्वनियाँ; यथा—क्, ख्, च्, छ् आदि।

4. प्राणत्व के आधार पर

प्राण का अर्थ है—वायु। उच्चारण में निकलने वाली वायु की मात्रा के आधार पर दो वर्ग बना सकते हैं।

(क) **अल्पप्राण**—जिनके उच्चारण में सीमित वायु निकलती है, उन्हें

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अल्पप्राण व्यंजन कहते हैं। ऐसी ध्वनियाँ 'ह' रहित होती हैं। प्रत्येक वर्ग की प्रथम, तृतीय और पंचम व्यंजन ध्वनियाँ; यथा—क्, ग्, ङ्, च्, ज्, ञ् आदि।

(ख) **महाप्राण**—जिनके उच्चारण में अपेक्षाकृत अधिक वायु निकलती है। ऐसी ध्वनि ह-युक्त होती है; जैसे—ख-कह (Kh), घ=गह (Gh) आदि। प्रत्येक वर्ग की दूसरी-चौथी ध्वनियाँ; यथा—ख्, घ्, छ्, झ्, ठ्, ढ् आदि।

5. निःश्वास मार्ग-आधार

मुख और नासिका मार्ग से निकलने वाली निःश्वास-वायु के आधार पर व्यंजनों को दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं :

(क) **मौखिक**— जिनके उच्चारण में वायु मुख मार्ग से निकलती है; यथा—क्, च्, ट्, त् आदि

(ख) **नासिक्य**—जिसमें निःश्वास-वायु मुख्यतः नासिका मार्ग से बाहर आती है; यथा—ङ्, ञ्, ण्, न्, म्।

6. संरचना-आधार

इस आधार पर व्यंजनों के तीन वर्ग बना सकते हैं :

(क) **असंयुक्त**—इसे मूल व्यंजन भी कहते हैं। जो व्यंजन अकेले स्वतंत्र रूप में प्रयुक्त हों; यथा—क्, ख्, च्, त् आदि।

(ख) **संयुक्त**—जब दो भिन्न ध्वनियाँ एक साथ प्रयुक्त हों। इनमें एक अर्ध और दूसरी पूर्ण ध्वनि होती है, अर्ध वर्ण पहले और पूर्ण वर्ण बाद में लिखा जाता है; यथा—क्त (रक्त), प्य, (प्यार), न्त (अन्त) आदि।

(ग) **द्वित्व**—जब किसी एक व्यंजन का एक अर्ध तथा दूसरा पूर्ण रूप एक साथ प्रयुक्त होता है; यथा- त्त (पत्ता), प्प (गप्प), क्का (पक्का) आदि।

7. मांसपेशियों की दृढ़ता-आधार

विभिन्न व्यंजनों के उच्चारण में मुख की मांसपेशियों की स्थिति में भिन्नता होती है। इस आधार पर व्यंजनों के तीन वर्ग बना सकते हैं—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(क) **दृढ़**—जिनके उच्चारण में मुख की मांसपेशियाँ दृढ़ हो जाती है; यथा—ण्, ष्।

(ख) **मध्यम**—जिनमें मुख की मांसपेशियाँ न तो दृढ़ होती हैं, न ही शिथिल होती हैं; यथा—च्, थ्।

(ग) **शिथिल**—जिनके उच्चारण में मुख की मांसपेशियां शिथिल होती हैं; यथा—प्, त्।

3.3. हिंदी शब्द-समूह

शब्द-समूह के लिए 'शब्दावली' और 'शब्द-भंडार' शब्दों के भी प्रयोग होते हैं, अतः इसके लिए 'हिंदी-शब्दावली' और 'हिंदी शब्द भंडार' नाम भी प्रयुक्त होते हैं। हिंदी भाषा में प्रयुक्त होने वाले शब्दों के समग्र रूप को हिंदी का शब्द-समूह कहते हैं। भाषा चिरपरिवर्तनशील है, इसलिए अन्य भाषाओं के ही समान हिंदी के शब्द-समूह के शब्दों की निश्चित संख्या का निर्धारण अत्यन्त कठिन कार्य है। समय-परिवर्तन के साथ यदि हिंदी में कुछ शब्दों का लोप होता है, तो पर्याप्त संख्या में नए शब्दों का आगमन भी होता रहता है। शब्दकोषों के विभिन्न संस्करणों में शब्दों की बढ़ती हुई संख्या इसका प्रमाण है। ऐतिहासिक दृष्टि से हिंदी शब्द-भण्डार पर विचार करें तो पाएँगे कि आदिकाल के प्रारंभिक चरण में तद्भव शब्दों का सर्वाधिक प्रयोग होता था। इसी काल में मुसलमानों के भारत-आगमन के कारण अरबी, फारसी तथा तुर्की के शब्दों का प्रयोग होने लग गया। हिंदी-भाषा के मध्यकाल में मुस्लिम प्रभाव वाली भाषाओं के शब्दों का प्रयोग बहुल रूप में होने लग गया तो भक्ति-आंदोलन से परंपरागत तत्सम शब्दों के प्रयोग में भी पर्याप्त वृद्धि हुई है। हिंदी की आधुनिक शब्दावली में अंग्रेज़ी के शब्दों का विशेष महत्त्व है।

मैंने हिंदी भाषा के शब्द अध्ययन के लिए विभिन्न शब्दों का वर्गीकरण स्रोत आधार पर इस प्रकार किया है—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

- हिंदी शब्द समूह
  - अज्ञातव्युत्पत्तिक (देशज)
  - ज्ञातव्युत्पत्तिक
    - परंपरागत
      - संस्कृत
        - तत्सम
        - तद्भव
      - संस्कृतेतर
    - नवागत
      - गृहीत
        - देशी
        - विदेशी
      - नवनिर्मित
        - संकर
        - पारिभाषिक
        - अनुकरणात्मक

3.2 शब्द की परिभाषा और शब्द-समूह का वर्गीकरण

(अ) **शब्द : परिभाषा**–भाषा की लघुतम, सार्थक और महत्त्वपूर्ण इकाई शब्द है; यथा–कमल, श्याम, सूर्य शब्द का सार्थक होना अनिवार्य है। शब्द सार्थकता की ही दृष्टि से लघुतम है और भाषा में महत्त्वपूर्ण है।

हिंदी शब्द समूह का वर्गीकरण

(क) स्रोत-आधार पर वर्गीकरण–हिंदी शब्द-समूह का स्रोत या ऐतिहासिक आधार पर अध्ययन होता रहा है। इस आधार पर निम्नलिखित प्रमुख वर्गों में विभक्त कर हिंदी शब्द-समूह का अध्ययन कर सकते हैं–

1. तत्सम शब्द (परंपरागत)–हिंदी का उद्भव संस्कृत से हुआ है, इसलिए हिंदी में संस्कृत का बहुल रूप में आना स्वाभाविक ही है। संस्कृत के जो शब्द हिंदी में मूल रूप में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें परंपरागत तत्सम शब्द कहते हैं। भक्तिकाल में भक्ति आंदोलन में ऐसे शब्दों के प्रयोग को बल मिला है। आधुनिक काल के आर्य समाज और सनातम धर्म के प्रचार से ऐसे शब्दों के प्रयोग में गति आई है, तो वर्तमान काल में साहित्यिक-परिनिष्ठित भाषा प्रयोग में गति आ गई है। ऐसे कुछ शब्द उदाहरणार्थ प्रस्तुत हैं–गो, जल, दिन, पुस्तक, सूर्य आदि।

2. तद्भव शब्द (परंपरागत)–संस्कृत के वे शब्द जो मूल रूप से

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

परिवर्तित होकर हिंदी में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें तद्भव शब्द कहते हैं; यथा–सूर्य > सूरज, कृष्ण > कन्हैया आदि। हिंदी भाषा में आदिकाल से ही ऐसे शब्दों का सर्वाधिक महत्त्व रहा है। हिंदी की विभिन्न बोलियों में तथा वार्तालाप में ऐसे शब्द भावभिव्यक्ति के मूलाधार हैं, साथ ही मानक हिंदी में इस शब्द वर्ग की सर्वाधिक महत्ता है। संख्या की दृष्टि से भी यह शब्द वर्ग सबसे बड़ा है।

3. विदेशी शब्द–हिंदी में विदेश की भाषाओं के शब्दों को विदेशी शब्द कहते हैं। हिंदी में विदेशी भाषा के पर्याप्त शब्दों का प्रयोग होता है। इस वर्ग के कुछ शब्द तो अपने मूल रूप में प्रयुक्त होते हैं, उन्हें विदेशी तत्सम शब्द कह सकते हैं; यथा–अगर, आराम (फारसी); अमीर, ज़रूर (अरबी); जेल, टीम (अंग्रेज़ी)। जो शब्द हिंदी में परिवर्तित होकर प्रयुक्त होते हैं, उन्हें विदेशी तद्भव शब्द कहते हैं; यथा–अन्दाजः > अन्दाजा, मर्दानः > मरदान (फारसी), किरायः > किराया, नुक्सान > नुकसान, (अरबी), टॉवेल > तौलिया, वोगि > बग्घी (अंग्रेज़ी) आदि।

हिंदी में आगत विदेशी शब्दों को विदेशियों के प्रभाव को ध्यान में रखकर दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं। प्रथम वर्ग में मुस्लिम प्रभाव वाली अरबी, फारसी तथा तुर्की के शब्दों को और द्वितीय वर्ग के यूरोपीय प्रभाव वाले अंग्रेज़ी-शब्दों को रख सकते हैं।। मुस्लिम प्रभाव वाली भाषाओं के अधिकांश शब्द उनकी सांस्कृतिक एवं धार्मिक भावना से जुड़े हैं, तो अंग्रेज़ी के अधिकांश शब्द आविष्कारों, पाश्चात्य-सभ्यता और आधुनिक सुविधा-साधनों से संबंधित हैं।

4. संकर शब्द–इसके लिए दोगला, द्विज और मिश्रित आदि शब्दों का प्रयोग होता है। दो या दो से अधिक वर्गों के शब्दों या शब्दांशों से बने शब्द को संकर शब्द कहते हैं; यथा–अजायबघर=अजायब (अरबी) + घर (हिंदी), जेलखाना=जेल (अंग्रेज़ी) + खाना, (फारसी) डॉक्टरी=डॉक्टर (अंग्रेजी) + ई (हिंदी प्रत्यय) आदि।

5. पारिभाषिक शब्द–ज्ञान-विज्ञान के क्षेत्र में प्रयुक्त होकर क्षेत्र विशेष के अनुरूप अर्थ देने वाले शब्द को पारिभाषिक शब्द कहते हैं। आधुनिक हिंदी भाषा में पारिभाषिक शब्दों का विशेष महत्त्व है। ऐसे शब्दों

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

का निर्माण बौद्धिक वर्ग के द्वारा विज्ञान, ज्योतिष, चिकित्सा, कृषि आदि विषयों के संदर्भ में किया जाता है। ऐसे शब्द मुख्यतः अंग्रेज़ी शब्दों के आधार पर बनाए जाते हैं। एक भाव के लिए एक ही शब्द के प्रयोग संबंधी एकरूपता के लिए भारत सरकार के अधीन वैज्ञानिक तथा तकनीकी शब्दावली आयोग कार्य कर रहा है। हिंदी में प्रयुक्त होने वाले ऐसे कुछ शब्द उदाहरण रूप में प्रस्तुत हैं–

Abnormal > असामान्य, Actor > अभिनेता, Clerk > लिपिक Comedy > कामदी, Tragedy > त्रासदी। हिंदी भाषाविज्ञान के कुछ पारिभाषिक शब्द द्रष्टव्य हैं–Interdependent > अन्योन्याश्रित। Semantics > अर्थ-विज्ञान, Stem > धातु, Phrase > पदबंध, Vowel > स्वर आदि।

6. देशज शब्द

इस वर्ग में लोक-व्यवहार से विकसित शब्दों को रख सकते हैं। ऐसे शब्दों की व्युत्पत्ति का ज्ञान नहीं होता है। इसीलिए इसे अज्ञातव्युत्पत्तिक शब्द कहते हैं। एक शब्द जो वर्तमान समय में देशज वर्ग में रखा गया है। वह व्युत्पत्ति ज्ञात होने पर तद्भव विदेशी या अनुकरणात्मक किसी वर्ग में रखा जा सकता है। 'पपीहा' देशज शब्द माना गया था, जब 'पी-पी हु' 'पीपी हूँ' से 'पपीहा' बनने का ज्ञान हुआ, तो अनुकरणात्मक शब्द बन गया। सुथनी, तेंदुआ, पुआल आदि देशज शब्द हैं।

7. देशी शब्द

भारत की हिंदी से इतर भाषाओं के शब्दों को इस वर्ग में रख सकते हैं। इस वर्ग की भाषाओं में हिंदी को प्रभावित करनेवाली भाषाएँ हैं– पंजाबी, बंगला, मराठी, गुजराती आदि।

8. अनुकरणात्मक शब्द

अनुकरण के आधार पर बने शब्दों को अनुकरणात्मक शब्द कहते हैं। हिंदी की विभिन्न बोलियों में अनुकरणात्मक शब्दों की काफी संख्या मिलती है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वार्तालाप संदर्भ में भी ऐसे शब्दों का पर्याप्त प्रयोग होता है। मानक हिंदी में भी यत्र-तत्र इनका प्रयोग होता है। स्वभाव के अनुसार हिंदी में प्रयुक्त अनुकरणात्मक शब्दों के ध्वन्यात्मक, प्रतिध्वन्यात्मक, दृश्यात्मक और विशेष भावात्मक चार वर्ग बनाए जा सकते हैं।

ध्वन्यात्मक–कड़-कड़, काँव-काँव, खन-खन, फट-फट आदि।

प्रतिध्वन्यात्मक–तल-वल, बालक-वालक (तत्सम), छुरा-उरा, ठीक-ठाक (तद्भव), सैर-वैर, कैद-वैद, पुलिस-वुलिस (विदेशी)।

दृश्यात्मक–जगमग, झिलमिल, जगर-मगर आदि।

विशेष भावात्मक–चोंचला, धाँधली, भोंड़ी आदि।

(ख) संरचना आधार

हिंदी शब्द-समूह के शब्दों को संरचना के आधार पर मुख्यतः तीन वर्गों में विभक्त कर सकते हैं।

1. मूल शब्द–ऐसे शब्द जिनके सार्थक खंड न किए जा सकें, उन्हें मूल शब्द कहते हैं। ऐसे शब्द हिंदी भाषा के मुख्याधार हैं। मूल शब्द वचन लिंग तथा कारक परिवर्तनों से मुक्त होते हैं; यथा–गाय, मैं, नीला, पीला मन्द, आना, जाना, खाना आदि।

2. यौगिक शब्द–जिस शब्दों के सार्थक खण्ड किए जा सकें, उन्हें यौगिक शब्द कहते हैं। हिंदी में ऐसे शब्द उपसर्ग या प्रत्यय के योग से बनते हैं; यथा–सुगन्ध (सु+गन्ध), कुमति (कु+मति), बेतुक (बे+तुक) सफलता (सफल+ता), बुढ़ापा (बुढ़ा+पा) आदि।

3. योगरूढ़–जिन शब्दों के सार्थक खण्ड तो किए जा सकें, किंतु अर्थ की दृष्टि से रूढ़ होते हैं, अर्थात् अर्थ की दृष्टि से ऐसे शब्दों में खंड नहीं हो सकते; यथा–लंबोदर (लंबा+उदर), दशानन (दश+आनन)। ये दोनों शब्द क्रमशः गणेश तथा रावण के अर्थ में रूढ़ होकर प्रचलित हैं।

3.3 हिंदी वर्तनी

वर्तनी शब्द का निर्माण संस्कृत की वृत् धातु में मनि प्रत्यय के योग से हुआ है–वृत+मनि=वर्त्मनि।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

संस्कृत में वर्त्मनी और वर्त्मनि दोनों शब्दों के प्रयोग मिलते हैं। हिंदी की सरलीकरण प्रक्रिया में 'वर्त्मनि' शब्द में से 'म' का लोप होकर 'वर्तनी' बन गया है। वर्तनी का शाब्दिक अर्थ है–सरणि या क्रमिक प्रयोग।

हिंदी में वर्तनी के लिए अक्षर-विन्यास, अक्षरन्यास, अक्षरी और वर्णन्यास आदि शब्दों के प्रयोग मिल जाते हैं। 'वर्तनी' सर्वाधिक प्रचलित शब्द है। अंग्रेज़ी में वर्तनी के लिए Spelling शब्द का प्रयोग होता है।

हिंदी भारत के अधिकांश प्रदेशों में प्रयुक्त होने के साथ भारत से बाहर कई देशों में प्रयुक्त होती है। इस प्रकार विस्तृत क्षेत्र में प्रयुक्त होने के कारण उसमें विविधता होना स्वाभाविक है। हिंदी के मानकीकरण में वर्तनी पर विशेष ध्यान दिया जाता है।

परिभाषा–भाषा के शब्दों के निश्चित वर्गों को निश्चित क्रम में प्रयुक्त करना वर्तनी है; यथा–तरल और सामान दो शब्द हैं। तरल में त, र, और ल तीन वर्ण है और इनका प्रयोग त, र, ल क्रमशः किया गया है। 'सामान' शब्द में स, म, और न तीन वर्ण और आ की मात्रा 'ा' दो बार आई है। इन चिह्नों को क्रमशः स, ा, म, ा, न प्रयोग किया गया है।

इस प्रकार वर्तनी संशोधन में दो तथ्यों को ध्यान में रखते हैं–

1. शुद्ध शब्द के लेखन में किन-किन लिपि चिह्नों (वर्ण और मात्रा) का प्रयोग करना है।

2. शब्द में प्रयुक्त लिपि-चिह्नों का सही क्रम में प्रयोग। हिंदी शब्दों की वर्तनी के संदर्भ में निम्नलिखित प्रमुख तथ्यों पर ध्यान रखना आवश्यक है–.

1. संयुक्त वर्ण

संयुक्त वर्ण के निर्माण में एक अर्ध, एक पूर्ण वर्ण का प्रयोग होता है। हिंदी के वर्ण को अर्ध रूप बनाने के लिए निम्नलिखित पद्धति अपनाई जाती है–

(i) जिन व्यंजनों के दाहिनी ओर खड़ी पाई होती है, उसे हटाकर अर्ध रूप बनाया जाता है; यथा–

ख – ख़्‌ > ख्याति

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

घ — घ् > विघ्न, कृतघ्न
ज — ज् > उज्ज्वल, ज्वलन
प — प् > प्यास, प्यार
श — श् > श्याम, पश्च

(ii) जिन व्यंजनों के दाहिनी और अर्ध पाई हो, तो उसे हटाकर अर्ध रूप बनाया जाता है; यथा–

क — क् > रक्त, पक्का
फ — फ् > दफ्तर, रफ्तार

(iii) जिन वर्णों की रचना में पाई नहीं होती, वरन वर्ण गोल या टेढ़े-मेढ़े, घुमावदार होते हैं, उन्हें अर्ध बनाने के लिए उनमें हलन्त का प्रयोग करते हैं; यथा–

ट — ट् > लट्टू, पट्टी
ड — ड् > लड्डू, गड्ड-मड्ड
ह — ह् > चिह्न, अपराह्न

2. हल् चिह्न-प्रयोग

हिंदी के वर्तमान स्वरूप में अकारान्त शब्द उच्चारण में व्यंजनांत हो गए हैं अर्थात् शब्द के अंतिम ह्रस्व व्यंजन का 'अ' लुप्त हो जाता है; यथा–

लेखन	उच्चारण
तन	तन्
राम	राम्
कमान	कमान्

इस प्रकार हिंदी के ऐसे शब्दों के उच्चारण की उपेक्षा कर उन्हें स्वरांत ही लिखना चाहिए, अर्थात् हलंत नहीं लगाना चाहिए। यहाँ यह ध्यान रखना चाहिए कि संस्कृतनिष्ठ भाषा में संस्कृत का मूल रूप ही अपनाया जाए। केंद्रीय हिंदी निदेशालय द्वारा इस संदर्भ में संकेत किया गया है, संस्कृत मूलक तत्सम शब्दों की वर्तनी में सामान्यतः संस्कृत रूप ही रखा जाए, परंतु जिन शब्दों के प्रयोग में हिंदी में हल चिह्न लुप्त हो चुका है, उसमें

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उसको फिर से लगाने का यत्न न किया जाए।" इस प्रकार महान, भगवान, विद्वान ही लिखा जाए।

3. अनुस्वार

हिंदी में अनुस्वार के लिए 'ं' चिह्न का प्रयोग किया जाता है। अनुस्वार का प्रयोग हिंदी में नासिक्य व्यंजन के अर्ध रूप के लिए किया जाता है। हिंदी में नासिक्य व्यंजन पाँच हैं—ङ, ञ, ण, न, म। संस्कृत के शब्दों में नासिक्य व्यंजनों के अर्ध रूप को पूर्ववत रूप में लिखा जाता है; यथा—अङ्क, मञ्जुल, घण्टी, तन्तु और कम्पन।

हिंदी में कण्ठ्य, तालव्य, मूर्द्धन्य, दंत्य और ओष्ठ्य पाँचों वर्गों के अर्ध नासिक्य व्यंजन के लिए सरलीकृत रूप अनुसार 'ं' ही अपनाना चाहिए। इस चिह्न से शब्द में प्रयुक्त पाँचों रूपों की पहचान की सरल है, क्योंकि इस चिह्न का प्रयोग इसके बाद आनेवाले व्यंजन वर्ण पर आधारित होता है। अर्थात अनुस्वार के बाद आनेवाले वर्ण के वर्ग को नासिक्य व्यंजन का अर्ध रूप होगा; यथा—

अंक	(क-कवर्ग>ङ्)	अङ्क	अंग	(ग-कवर्ग>ङ्)	अङ्ग
अंजन	(ज-चवर्ग>ञ्)	अञ्जन	मंजन	(ज-चवर्ग>ञ्)	मञ्जन
घंटी	(ट-टवर्ग>ण्)	घंटी	मंडन	(ड-टवर्ग>ण्)	मण्डल
चंद	(द-तवर्ग>न्)	चन्द्र	पंत	(त-तवर्ग>न्)	पन्त
चंपू	(प-पवर्ग>म्)	चम्पू	पंप	(प-तवर्ग>म्)	पम्प

हिंदी शब्द-उच्चारण और लेखन में ध्यान रखना चाहिए कि यदि अर्ध नासिक्य व्यंजन के बाद कोई अन्य अर्ध व्यंजन आए, तो अर्ध व्यंजन को अनुस्वार के रूप में ही लिपिबद्ध करें; यथा—

अशुद्ध	शुद्ध
कम्प्यूटर	कंप्यूटर
अन्त्य	अंत्य
स्वतन्त्र	स्वतंत्र

हिंदी की अन्तस्थ (य्, र्, ल्, व्) और ऊष्म (श्, ष्, स्, ह्) व्यंजन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ध्वनियों के साथ यदि नासिक्य रूप उभरे, तो उसके लिए प्रायः अनुस्वार का प्रयोग किया जाता है; यथा–

संयत, संवत, अंश, कंस, हंस, संहार।

अर्ध नासिक्य प्रयोग के संदर्भ में यह ध्यान रखना आवश्यक है कि यदि अर्ध नासिक्य के बाद वही नासिक्य व्यंजन पूर्ण रूप में प्रयुक्त हो, तो यहाँ अर्ध नासिक्य व्यंजन अनुस्वार रूप में नहीं लिखा जाएगा। वह अर्ध नासिक्य मूल रूप में लिखा जाएगा।

अन्न, छन्न,.......सम्मान, सम्मिलित, सम्मेलन।

4. अनुनासिकता

जिस ध्वनि के उच्चारण में निःश्वास की वायु मुख के साथ नासिका से भी निकलती है, उसे अनुनासिक कहते हैं। इसके लिए 'ँ' का प्रयोग किया जाता है; यथा–गाँव, चाँद, साँप आदि।

सरलीकरण प्रक्रिया में इसे अनुस्वार 'ं' की तरह ही प्रयोग किया जाता है। इससे स्पष्ट अभिव्यक्ति सम्भव नहीं है; यथा–हंस (विशेष पक्षी) और हँस (हँसना) को सरलीकृत रूप में 'हंस'-'हंस' लिखें, तो स्पष्ट बोध नहीं होगा। इसी प्रकार 'अंध' और 'अंधेरा' लिखने से स्पष्ट उच्चारण ज्ञान नहीं होता, किंतु 'अंध' और 'अँधेरा' लेखन से शुद्ध उच्चारण संभव है।

हिंदी के अनुनासिक उच्चारण और लेखन संदर्भ में निम्नलिखित बातों पर ध्यान रखना चाहिए–

जब शब्द के अक्षर की रचना शिरोरेखा के नीचे हो, तो अनुनासिक का मूल रूप लिखते हैं; यथा–आँख, गाँव, चाँद, टाँगा, पूँछ, हँसना।

- जब शब्द के अक्षर में लगी मात्रा शिरोरेखा के ऊपर या नीचे से ऊपर तक हो, तो अनुनासिक चिह्न को सुंदरता और सरलता के लिए अनुस्वार 'ं' के रूप में लगाते हैं; यथा–मेँ>में, मैँ>मैं, नहीँ>नहीं, क्योँ>क्यों।

- हिंदी भाषा में भी "जैसी संगति बैठिए वैसे ही गुण होत" का रंग दिखाई देता है। यदि किसी शब्द में नासिक्य वर्ग का प्रयोग हो, तो

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उसके पूर्व का वर्ण उच्चारण में प्रायः अनुनासिक हो जाता है, किंतु लेखन में इसकी उपेक्षा की जाती है; यथा–

उच्चारण	लेखन (शुद्ध)
तँन	तन
रँण	रण
दँम	दम
काँम	काम
राँम	राम
श्याँम	श्याम

- क्षेत्रीयता के प्रभाव से कभी-कभी अकारण अनुनासिकता उभर आती है। इसकी उपेक्षा कर हिंदी के मानक रूप को ही अपनाना चाहिए; यथा–

गाँय > गाय, घाँस > घास, पूँछना > पूछना।

5. अंतस्थ वर्ण के पूर्व अर्ध वर्ण का प्रयोग

हिंदी के अंतस्थ वर्ण (य, र, ल, व) के पूर्व यदि अर्ध वर्ण प्रयोग किया जाए, तो लेखन में एक अर्ध वर्ण उच्चारण में दो अर्ध वर्ण बन जाता है; यथा–

लेखन (शुद्ध)	उच्चारण (शुद्ध)
अन्य	अन्न्य
उपन्यास	उपन्न्यास
अन्वय	अन्न्वय
अन्वित	अन्न्वित

6. य-श्रुति

हिंदी स्वर प्रधान भाषा है। जहाँ पर अर्ध स्वर य, व का उच्चारण स्वरात्मक हो जाए, अर्थात उसमें व्यंजन का आभास न हो, वहाँ स्वर का प्रयोग करना चाहिए; यथा–

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अशुद्ध	शुद्ध
नयी	नई
मिठायी	मिठाई
नये	नए
लिये	लिए

● क्रिया के संभाव्य भविष्यत काल निर्माण में धातु आ, जा, खा आदि में 'ए' प्रत्यय लगाना चाहिए न कि 'ये'; यहाँ आ > आए, खा > खाए, जा > जाए।

● क्रिया के सामान्य भविष्यत काल निर्माण में धातु के साथ 'येगा' का प्रयोग न कर 'एगा' का प्रयोग करना चाहिए; यथा–आ>आएगा, खा > खाएगा, जा > जाएगा।

● क्रिया के आदरसूचक रूप भी स्वरात्मक ही शुद्ध माने गए हैं; यथा–

अशुद्ध	शुद्ध
आइये/आयिये	आइए
खाइये/खायिये	खाइए
जाइये/जायिये	जाइए।

● संज्ञा शब्दावली के एक वचन से बहुवचन बनाने में भी स्वरात्मक रूप अपना चाहिए: यथा–

अशुद्ध	शुद्ध
बाधा–बाधायें	बाधाएँ
बाधावों	बाधाओं
लता–लतायें	लताएँ
लतावों	लताओं
समस्या–समस्यायें	समस्याएँ
समस्यावों	समस्याओं
साधु–साधुवों	साधुओं

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

7. 'र' का प्रयोग

हिंदी वर्णमाला में 'र्' ध्वनि के केवल एक चिह्न 'र' स्वीकृत है; किंतु इसके लिए चार चिह्नों के लिए प्रयोग होते हैं–

र	–	रमा, राम, राह
/	–	क्रम, भ्रम, श्रम
^	–	ट्रक, ट्राम, ड्रम
ʿ	–	कर्म, पर्व, धर्म

इनमें प्रथम तीन चिह्न पूर्ण हैं–र–रमा, क्रम > क्रम, ट्रक > ट्रक। चतुर्थ रूप ʿ र का अर्ध रूप है। इसे रेफ कहते हैं और यह शिरोरेखा के ऊपर लगाया जाता है। इस चिह्न को जहाँ उच्चारण किया जाता है उसके आगे वाले पूर्ण वर्ण पर लगाया जाता है; यथा

अशुद्ध	शुद्ध
आर्शीवाद	आशीर्वाद
आर्चाय	आचार्य
चार्तुय	चातुर्य

यदि उच्चरित स्थान के बाद अर्ध वर्ण हो, तो रेफ उसके बाद वाले पूर्ण वर्ण पर ही लगाया जाएगा। यदि रेफ के उच्चरित स्थान के बाद दो अर्ध वर्ण हों, तो दोनों के बाद के पूर्ण वर्ण पर लगाया जाएगा; यथा–

अशुद्ध	शुद्ध
वर्क्स	वर्क्स
वर्त्स्य	वर्त्स्य

8. अंग्रेज़ी का प्रभाव

अंग्रेज़ी में स्वरों के ह्रस्व और दीर्घ न होकर एक ही रूप है–a, e, i, o, u. अंग्रेज़ी के प्रभाव से हिंदी शब्दों की मात्रा में परिवर्तन हो गया है। इस प्रभाव से मुक्त रह कर हिंदी का मानक रूप ही अपनाना चाहिए; यथा–

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अशुद्ध	शुद्ध
अशोका	अशोक
गुप्ता	गुप्त
गोयला	गोयल
मिश्रा	मिश्र
रामा	राम

9. आगत ऑ ध्वनि

अंग्रेज़ी के प्रचार से हिंदी में अंग्रेज़ी कें अनेक शब्द स्थान पा चुके हैं। अंग्रेज़ी शब्दों के साथ हिंदी में 'ऑ' ध्वनि प्रभावी रूप में प्रयुक्त होने लगी है। ऐसे शब्दों के शुद्ध लेखन और स्पष्ट अभिव्यक्ति के लिए इसे अपना लिया गया है। यदि इसे न अपनाएँ तो शब्द अस्पष्ट हो सकते हैं; यथा—बाल (Ball) और बाल (Hair) तभी स्पष्ट होंगे जब 'ऑ' का प्रयोग कर लिखा जाए—बॉल—बाल।

10. उत्क्षिप्त ध्वनि

हिंदी में मूर्द्धन्य 'ड्' और 'ढ्' के साथ उत्क्षिप्त 'ड़' और 'ढ़' ध्वनियाँ विकसित हो गई हैं। इसलिए ड्-ड़ और ढ्-ढ़ ध्वनियों की स्पष्ट पहचान से वर्तनी की शुद्धता रहेगी। इनके प्रयोग द्रष्टव्य हैं—

ड—रोड, रेडियो, सोडा
ड़—सड़क, पहाड़, घोड़ा
ढ—ढक्कन, ढाल, ढोल
ढ़—कढ़ाई, चढ़ाई, पढ़ाई

11. क्षेत्रीय प्रभाव से मुक्ति

हिंदी का प्रयोग विस्तृत क्षेत्र में होता है। इसलिए विभिन्न क्षेत्रों का प्रभाव यत्र-तत्र उभर आता है। हिंदी शब्दों को ऐसे प्रभाव से मुक्त रखकर मानक रूप में प्रयुक्त करना चाहिए; यथा—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

	अशुद्ध	शुद्ध
आगम	इस्कूल/सकूल	स्कूल
	इस्त्री/ सत्री	स्त्री
	सुरेंदर	सुरेन्द्र
लोप–	कृप्या	कृपया
	मिंट	मिनट
	तिल्क	तिलक
परिवर्तन	बन	वन
	बचन	वचन
	संकर	शंकर
	साम	शाम

शब्द भाषा की सार्थक महत्त्वपूर्ण इकाई है। वर्तनी के ज्ञान से शुद्ध शब्दों का प्रयोग संभव होता है। जिससे भावों की प्रेरक संप्रेषणीयता संभव होती है। इस प्रकार वर्तनी की शुद्धता स्पष्ट अभिव्यक्ति का आधार है।

3.4 हिंदी-प्रचार-प्रसार में प्रमुख व्यक्तियों का योगदान

उन्नीसवीं शताब्दी में भारत में भावनात्मक संदर्भ की क्रांति शुरू हुई। उस समय देश की सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक स्थिति अत्यंत शोचनीय हो चुकी थी। देश में होने वाले आंदोलनों से जनजीवन प्रभावित हो रहा था। भारत की राष्ट्रीयता और राष्ट्रीय आंदोलन के लिए एक भाषा की आवश्यकता सामने आई। इस आवश्यकता के संदर्भ में **डॉ. अंबा शंकर नागर** का मंतव्य उद्धरणीय है–"सन् 1857 का आंदोलन दासता के विरुद्ध स्वतंत्रता का पहला आंदोलन था। यह आंदोलन यद्यपि संगठन और एकता के अभाव के कारण असफल रहा पर इसने भारतवासियों के हृदय में स्वतंत्रता की उत्कट अभिलाषा उत्पन्न कर दी। आगे चलकर जब भारत के विभिन्न प्रांतों में स्वतंत्रता के लिए संगठित प्रयत्न आरंभ हुए तो यह स्पष्ट हो गया कि बिना एक सामान्य भाषा के देश में संगठन होना असंभव है।"

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में सामाजिक, धार्मिक ही नहीं, राजनीतिक आंदोलनों में हिंदी मुख्य भाषा सिद्ध हुई। इस प्रकार हिंदी को व्यापक जनाधार मिला। राष्ट्रीय भावना जगाने हेतु हिंदी को संपर्क भाषा के रूप में प्रयोग किया गया । विभिन्न व्यक्तियों और संस्थाओं द्वारा हिंदी-प्रयोग हेतु आंदोलन के रूप में कार्य किया गया है।

हिंदी प्रयोग के आंदोलन में बलवती भूमिका निभाने वाले व्यक्तियों की लंबी अवलि है। उनमें से कुछ प्रमुख व्यक्तियों के संदर्भ प्रस्तुत हैं–

1. लोकमान्य बाल गंगाधर तिलक

लोकमाय बाल गंगाधर तिलक प्रारंभ में परम विनम्र नेता थे। परिस्थितियों ने उन्हें ओजस्वी नेता बना दिया। "स्वराज्य हमारा जन्मसिद्ध अधिकार है" नारा देने वाले तिलक 'स्वदेशी' के प्रबल समर्थक थे। उनकी मान्यता थी कि हिंदी ही एकमात्र ऐसी भाषा है, जो राष्ट्रभाषा की पदाधिकारी है। उन्होंने हिंदी के विषय में कहा था–

"हिंदी राष्ट्रभाषा बन सकती है।...मेरी समझ में हिंदी भारत की सामान्य भाषा होनी चाहिए यानी समस्त हिदुस्तान में बोली जाने वाली भाषा होनी चाहिए।"

लोकमान्य तिलक देवनागरी को 'राष्ट्रलिपि' और हिंदी को 'राष्ट्रभाषा' मानते थे। उन्होंने नागरी प्रचारिणी सभा, काशी के दिसम्बर, 1905 के अधिवेशन में कहा था–

"भारत के लिए एक राष्ट्रभाषा की स्थापना करना है, क्योंकि सबके लिए समान भाषा राष्ट्रीयता का महत्त्वपूर्ण अंग है। समान भाषा के द्वारा हम अपने विचार दूसरों पर प्रकट करते हैं।...अतएव यदि आप किसी राष्ट्र के लोगों को एक-दूसरे के निकट लाना चाहें तो सबके लिए समान भाषा से बढ़कर सशक्त अन्य कोई बल नहीं है।"

लोकमान्य तिलक जीवन भर हिंदी के प्रचार-प्रसार में लगे हुए थे। उन्होंने हिंदी को राष्ट्रभाषा के रूप में अपनाने के लिए बार-बार आग्रह किया था।

निर्विवाद रूप से कहा जा सकता है कि उन्होंने अंग्रेज़ी में भाषण

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

देना छोड़ कर हिंदी सीखी और हिंदी के प्रबल समर्थक बन गए थे। यह उनका हिंदी और देश-प्रेम ही था।

2. लाला लाजपतराय

पंजाब केसरी लाला लाजपतराय प्रबल आर्य समाजी देशभक्त थे। वे महान मानव प्रेमी और ओजस्वी वक्ता थे। स्वदेशी वस्तुओं के समर्थक और विदेशी वस्तुओं के विरोधी थी। उन्होंने अंग्रेज़ी और पंजाबी पत्र के साथ 'वंदेमातरम्' दैनिक उर्दू पत्र का प्रकाशन किया। उन दिनों पंजाब में हिंदी-उर्दू का विवाद चल रहा था। पंजाब में हिंदी प्रचार-प्रसार में लाला लाजपतराय की बलवती भूमिका थी। उन्होंने सन् 1911 में पंजाब शिक्षा संघ की स्थापना की। शिक्षा में हिंदी को समुचित स्थान दिलाने का सराहनीय प्रयास किया। सन् 1886 में लाहौर में दयानंद ऐंग्लो वैदिक कॉलेज की स्थापना की गई। इससे हिंदी प्रसार को सुदृढ़ आधार मिला। इस कॉलेज में सभी विद्यार्थियों को हिंदी पढ़ने की अनिवार्यता थी। लाला लाजपतराय के प्रयास से पंजाब विश्वविद्यालय में हिंदी को सम्माननीय स्थान मिला। उन्हीं का प्रयास था कि पंजाब विश्वविद्यालय में रत्न और प्रभाकर के माध्यम से हिंदी को पाठ्यक्रम में स्थान मिला। हरियाणा के विभिन्न विश्वविद्यालयों में इन परीक्षाओं का सूत्रपात भी वहीं से हुआ है।

लाला लाजपतराय विशेष उग्र और क्रांतिकारी नेता थे। उनके द्वारा हिंदी में भाषण देने से जन सामान्य विशेष रूप में आंदोलित होते थे। वे हिंदी भाषा के माध्यम से भारत को एक सूत्र में बाँधना चाहते थे। निश्चय ही लाला लाजपतराय महान हिंदी प्रेमी और हिंदी को राष्ट्रभाषा बनाने के प्रबल सार्थक थे।

3. पं. मदनमोहन मालवीय

मालवीय जी महान हिंदूवादी राष्ट्रीय नेता था। उन्हें तीन बार हिंदू महासभा के अध्यक्ष पद पर प्रतिष्ठित किया गया था। वे सन् 1884 से राष्ट्रीय कार्यों में समर्पित होकर लग गए थे। वे अपने क्रियाकलाप में हिंदी का प्रयोग करते, औरों में भी हिंदी-प्रेम जगाते। सन् 1886 में एक अधिवेशन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में मालवीय जी के व्याख्यान से प्रभावित होकर कालाकांकर के राजा ने इन्हें हिंदुस्तान दैनिक पत्र का संपादक बनाया था। यहीं से उनकी हिंदी-सेवा का अनुप्रेरक रूप सामने आया है। उन्होंने 1907 ई. में साप्ताहिक हिंदी 'अभ्युदय' का प्रारंभ किया। यह पत्र सन् 1915 में दैनिक समाचार पत्र बना। मालवीय जी ने हिंदी प्रचार-प्रसार को गति देने के लिए सन् 1910 में प्रयाग (इलाहाबाद) से 'मर्यादा' हिंदी मासिक पत्रिका और 20 जुलाई, 1933 में 'सनातन धर्म' हिंदी पत्र का प्रकाशन शुरू किया। मालवीय जी हिंदी के महान प्रेमी थे। इनकी प्रेरणा से 'भारत', 'हिंदुस्तान' और 'विश्वबन्धु' जैसे चर्चित पत्रों का प्रकाशन शुरू हुआ था।

मालवीय जी के मन में हिंदी के लिए विशेष आदर भाव था। इसीलिए उन्होंने शिक्षा में हिंदी की अनिवार्यता पर बल दिया। सन् 1917 में बनारस हिंदू विश्वविद्यालय की स्थापना इसी दृष्टि से हुई है। यहाँ के सभी विद्यार्थियों के लिए हिंदी शिक्षा अनिवार्य थी। उन्होंने हिंदी भाषा के विषय में स्पष्ट रूप से कहा है—

"राष्ट्रीय शिक्षा अपनी उत्तमता के उच्च शिखर पर तब तक नहीं पहुँच सकती, जब तक जनता की मातृभाषा अपने उचित स्थान पर शिक्षा के माध्यम तथा सर्वसाधारण के व्यवहार के रूप में स्थापित न की जाए।"

उन्होंने उन्नीसवीं शताब्दी के अंत में हिंदी के लिए प्रबल संघर्ष किया। राजा शिवप्रसाद सितारे-हिंद के साथ न्यायालय में हिंदी और देवनागरी के लिए ज़ोरदार संघर्ष किया। उन्होंने कहा था कि जनता को न्याय दिलाने के लिए न्यायालय की भाषा हिंदी ही होनी चाहिए। न्यायालयों में हिंदी को स्थान दिलाने का श्रेय मालवीय जी को है।

नागरी प्रचारिणी सभा, काशी की स्थापना सन् 1893 में हुई। इसकी स्थापना में मालवीय जी की विशेष भूमिका रही है। हिंदी प्रचार के अग्रणी नेता मालवीय जी 10 अक्तूबर, 1910 को संपन्न हिंदी साहित्य सम्मेलन के प्रथम अधिवेशन के अध्यक्ष थे। उनकी प्रेरणा से देश में हिंदी के प्रति प्रबल अनुराग और राष्ट्रीयता का भाव जागा है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

4. महात्मा गाँधी

स्वतंत्रता आंदोलन में महात्मा गाँधी सजग, साहसी और आदर्श नेता के रूप में सामने आए। भारतीय आदर्शों को समाज में पल्लवित कराने में गाँधी जी ने अपने जीवन का हर पल लगाया। दक्षिण अफ्रीका से लौटने के बाद हिंदी और हिंदुस्तान को जगाने में लग गए। सन् 1917 में गुजरात प्रदेश के भड़ौच के गुजरात शिक्षा परिषद् के अधिवेशन में उन्होंने अंग्रेज़ी को राष्ट्रभाषा बनाने का विरोध किया और हिंदी के महत्त्व पर मुक्त कण्ठ से चर्चा की थी–

"राष्ट्र की भाषा अंग्रेज़ी नहीं हो सकती। अंग्रेज़ी को राष्ट्रभाषा बनाना देश में 'ऐस्पेरेण्टों' को दाखिल करना है। अंग्रेज़ी को राष्ट्रीय भाषा बनाने की कल्पना हमारी निर्बलता की निशानी है।"

महात्मा गाँधी ने सन् 1918 में हिंदी साहित्य सम्मेलन के इन्दौर के अधिवेशन में हिंदी-प्रेम प्रकट करते हुए आह्वान किया था–"आप हिंदी को भारत की राष्ट्रभाषा बनाने का गौरव प्राप्त करें। हिंदी सब समझते हैं। इसे राष्ट्रभाषा बनाकर हमें अपना कर्तव्य पालन करना चाहिए।"

भारत में शिक्षा के माध्यम पर दो टूक चर्चा करते हुए गाँधी जी ने 2 सितम्बर, 1921 को कहा था, "अगर मेरे हाथों में तानाशाही सत्ता हो, तो मैं आज से ही विदेशी माध्यम के ज़रिये हमारे लड़के-लड़कियों की शिक्षा बंद कर दूँ और सारे शिक्षकों ओर प्रोफेसरों से यह माध्यम तुरंत बदलवा दूँ।"

गाँधी जी की दृष्टि में हिंदी ही भारत की संपर्क भाषा के रूप में आदर्श भूमिका निभा सकती है। उन्होंने विभिन्न व्यक्तियों, पत्र-पत्रिकाओं और संस्थाओं को हिंदी-प्रयोग की अनूठी प्रेरणा दी है। वे हिंदी को राष्ट्रीय एकता, स्वाधीनता की प्राप्ति और सांस्कृतिक उत्कर्ष का आधार मानते थे। उन्होंने हिंदी को साधन और साध्य दोनों रूपों में अपनाया था। महात्मा गाँधी के हिंदी प्रेम और प्रचार-प्रसार के विषय में डॉ. रामविलास शर्मा का कथन विशेष रूप में उल्लेखनीय है–"दक्षिण भारत में गाँधी जी और उनके अनुयायियों-सहयोगियों ने जितना हिंदी प्रचार किया, उतना और किसी नेता, राजनीतिक पार्टी या सांस्कृतिक संस्था ने नहीं किया।"

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

गाँधी जी हिंदी और भारतीय भाषाओं के प्रबल समर्थक थे। उन्होंने हिंदी प्रचार-प्रसार को गति देने के लिए विभिन्न संस्थाओं का विशेष सहयोग लिया था। गाँधी सेवा संघ, चर्खा संघ, हरिजन सेवक संघ आदि का सारा कामकाज हिंदी में होता था। निश्चय ही हिंदी-प्रसार के प्रयत्न में गाँधी जी की भूमिका अग्रगण्य रही है।

5. राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन

राष्ट्रभाषा हिंदी को संघ की राजभाषा बनाने में जो प्रयास राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन ने किया है, वह सदा याद किया जाएगा। पं. मदनमोहन मालवीय के दर्शाए गए मार्ग पर चल कर इन्होंने हिंदी की अनुपमेय सेवा की है। इनके द्वारा हिंदी साहित्य सम्मेलन के माध्यम से की गई हिंदी की सेवा अनुपमेय रही है। टंडन जी हिंदी साहित्य सम्मेलन के संस्थापकों में से थे। इन्हीं की प्रेरणा से महात्मा गाँधी जी भी हिंदी साहित्य सम्मेलन से जुड़े। ये लाला लाजपतराय के साथ मिलकर भी हिंदी के प्रसार में लगे रहे। लाला जी की मृत्यु के पश्चात् टंडन जी 'लोक सेवा मंडल' के सभापति बन कर हिंदी-प्रसार में लगे रहे। इसका कार्यालय लाहौर में था। इसलिए टंडन जी ने वहाँ की संस्थाओं के माध्यम से हिंदी का अनुप्रेरक प्रसार किया। ये हिंदी के प्रबल समर्थक थे, गाँधी जी हिंदुस्तानी के समर्थक थे।

टंडन जी की प्रेरणा से हिंदी साहित्य सम्मेलन आज भी हिंदी के प्रचार-प्रसार में लगा है। यह टंडन जी की ही देन है।

6. डॉ. राजेंद्र प्रसाद

महात्मा गाँधी और हिंदी के परम भक्त डॉ. राजेंद्र प्रसाद अखिल भारतीय कांग्रेस के सम्माननीय सदस्य थे। विभिन्न हिंदी सम्मेलनों की अध्यक्षता और सहभागिता करते हुए इनका सहज और निकट संबंध महात्मा गाँधी, मदनमोहन मालवीय और राजर्षि पुरुषोत्तमदास टंडन से हुआ। देश की सभी हिंदी संस्थाओं से इनका गहरा संबंध था और ये पूरी रुचि और पूरे उत्साह से भाग लेते रहे। ये हिंदी के प्रयोग हेतु सबको प्रेरित करते रहे। इनका हिंदी के संदर्भ का विचार अनुकरणीय है–

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

"मैं हिंदी के प्रचार, राष्ट्रभाषा के प्रचार को राष्ट्रीयता का मुख्य अंग मानता हूँ। मैं चाहता हूँ कि यह भाषा ऐसी हो, जिसमें हमारे विचार आसानी से साफ़-साफ़ स्पष्टतापूर्वक व्यक्त हो सकें।...राष्ट्रभाषा ऐसी होनी चाहिए, जिसे केवल एक जगह के ही लोग न समझें, बल्कि उसे देश के सभी प्रांतों में सुगमता से पहुँचा सकें।"

डॉ. राजेंद्र प्रसाद पर महात्मा गाँधी का विशेष प्रभाव पड़ा है। हिंदी के प्रचार-प्रसार में इनकी भूमिका विशेष उल्लेखनीय रही है। इन्होंने भारतीय भाषाओं को महत्त्व देते हुए कहा है–

"मेरा दृढ़ मत है कि कोई भी शख़्स अपनी मातृभाषा के द्वारा ही तरक्की कर सकता है।...देश-भर को बाँधने के लिए, भारत के भिन्न-भिन्न हिस्से एक दूसरे से संबंधित रहें, इसके लिए हिंदी की ज़रूरत है।" निश्चय ही डॉ. राजेंद्र प्रसाद की हिंदी-सेवा सदा ही याद की जाएगी। भारतीय संविधान सभा के अध्यक्ष के रूप में हिंदी को सम्माननीय स्थान दिलाने का श्रेय डॉ. राजेंद्र प्रसाद को है। राष्ट्रपति के रूप में हिंदी और भारतीय भाषाओं को सम्मानजनक स्थान दिलाने का सराहनीय प्रयास किया है।

7. काका कालेलकर

हिंदी के प्रचार-प्रसार में अहिंदी भाषियों का नाम गौरव से लिया जाता है। ऐसे हिंदी-प्रेमियों में काका कालेलकर का नाम विशेष श्रद्धा से लिया जाता है। इन्होंने हिंदी के प्रसार में समर्पित होकर कार्य किया है। उन्होंने राष्ट्रभाषा प्रचार समिति से जुड़कर और गुजरात में रहकर हिंदी-प्रसार को नई दिशा प्रदान की है। उन्होंने कभी अंग्रेज़ी का विरोध नहीं किया, किन्तु प्रादेशिक भाषाओं और हिंदुस्तानी के प्रबल हिमायती थे। यह निर्विवाद तथ्य है कि काका कालेलकर 'हिंदुस्तानी' के समर्थक थे। उस समय हिंदुस्तानी का अर्थ था–हिंदी और उर्दू का मिश्रित रूप। अंग्रेज़ों के शासन और अंग्रेज़ी के प्रभाव में 'हिंदुस्तानी' के प्रसार से हिंदी को ही लाभ हुआ है। इससे जनसामान्य में हिंदी के प्रति अनुराग विकसित हुआ है। गाँधी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

जी के अनुयायी काका कालेलकर का नाम हिंदी-आंदोलन के संदर्भ में सदा याद किया जाएगा।

इन सब महापुरुषों के प्रयास से देश में राष्ट्रीयता का भाव विकसित हुआ, देश स्वतंत्र हुआ। हिंदी प्रसार के आंदोलन में हिंदी-प्रेमियों की लंबी नामावली है। जिनके सतत प्रयास से हिंदी को सम्मानजनक स्थान मिला। इनमें से गोविंददास, स्वामी दयानंद, श्रद्धानंद, विनोबा भावे आदि के नाम श्रद्धा से लेने योग्य हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

4

हिंदी पद एवं अर्थ

4.1 पद एवं हिंदी पद-भेद

पद के लिए 'रूप' शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। कभी-कभी शब्द और पद समान लगने लगते हैं, किंतु दोनों में पर्याप्त अंतर है। भाषा की लघुतम, स्वतन्त्र, सार्थक और महत्त्वपूर्ण इकाई शब्द है। शब्द उस आम आदमी की तरह है, जो अकेला हो, या अपरिचितों के मध्य होने पर भी अकेला हो; यथा—'कमल' एक शब्द है जिसके विषय में कुछ भी नहीं पता।

(क) **परिभाषा : भाषा की व्याकरणिक योग्यता प्राप्त इकाई पद है।** व्याकरणिक योग्यता का अर्थ है कि पद में वाक्य-रचना की शक्ति होती है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि जब शब्द में वाक्य रचना की क्षमता आ जाती है, तो वह पद बन जाता है। यह पूर्णरूपेण उसी प्रकार है जैसे अकेला आदमी 'आम आदमी' होता है, किंतु जैसे ही उसके पास उसके पिता जी आ जाते हैं, तो वह पुत्र पद पा जाता है और यदि उसका पुत्र आ जाए, तो पिता का पद मिल जाता है। निश्चय ही वाक्य में स्थान पाते ही शब्द उच्चतर इकाई पद पर प्रतिष्ठित हो जाता है।

डॉ. भोलानाथ तिवारी ने पद को परिभाषित करते हुए लिखा है, "शब्द को वाक्य में प्रयुक्त होने के योग्य बना लेने पर उसे पद की संज्ञा दी जाती है।"

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

डॉ. कपिलदेव द्विवेदी ने शब्द में व्याकरणिक योग्यता आने से पद-रचना को रेखांकित करते हुए कहा है, "कोई भी शब्द जब तक पद नहीं बन जाएगा, उसका प्रयोग नहीं हो सकता है। पद बनने के लिए शब्द में कुछ विशेष अर्थों के बोधक प्रत्यय लगाए जाते हैं। इनके लगाने पर वह शब्द प्रयोग के योग्य होता है।"

(ख) **पद-रचना**–हिंदी तार-संप्रेषण में पदानुसार शुल्क देना होता है। इसलिए विभिन्न पदों को शिरोरेखा से निबंध कर लिखते हैं; यथा–

सामान्य लेखन–रमेश के लिए डाक से रुपये भेजे जा रहे हैं।
तार-संप्रेषण–रमेशकेलिए डाकसेरुपये भेजे जारहेहैं।

ध्यान रहे सामान्य लेखन से भी तार भेजा जा सकता है, किंतु तब दस शब्दों का शुल्क देना होगा। दूसरे वाक्य में चार पद हैं।

एक शब्द से कई-कई पदों की रचना की जा सकती है; यथा–'पढ़ना' एक शब्द है। इससे अनेक पदों की रचना संभावित है–पढ़ता है, पढ़ रहा है, पढ़ता था, पढ़ रहा था, पढ़ेगा, पढ़ रहा होगा। पढ़ती है, पढ़ रही है, पढ़ती थी, पढ़ रही थी, पढ़ेगी, पढ़ रही होगी आदि।

पद रचना में शब्द के साथ संबंध तत्त्व का योग होता है। पद के मूल तत्त्व या शब्द को 'अर्थ तत्त्व' और व्याकरणिक योग्यता प्रदान करने वाले तत्त्व को 'संबंध तत्त्व' कहते हैं।

संबंध तत्त्वों को दो वर्गों में विभक्त कर पद-रचना का विवेचन कर सकते हैं।

(क) **शून्य संबंध तत्त्व**–जब वाक्य रचना में शब्द का प्रयोग बिना संबंध तत्त्व के होता है, तब भी उसमें व्याकरणिक क्षमता आ जाती है; यथा–'फूल' एक शब्द है। इसका वाक्य में संबंध तत्त्व के बिना प्रयोग करने पर पद बन गया है–'फूल बहुत सुंदर है।'

(ख) **स्वतंत्र संबंध तत्त्व**–अधिकांश भाषाओं में पद रचना के मुख्य आधार स्वतंत्र संबंध तत्त्व हैं। हिंदी में ऐसी रचना विविध संदर्भों में देख सकते हैं। हिंदी के विभिन्न कारक चिह्नों–ने, को, से, के लिए, का, के, की, पर आदि से पद रचना संभावित होती है; यथा–

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

श्याम ने, श्याम को, श्याम के लिए, श्याम की आदि।

पद-रचना में प्रयुक्त स्वतन्त्र संबंध तत्त्वों से काल, लिंग, वचन, पुरुष और कारक आदि की अभिव्यक्ति होती है।

ग. पद-विभाग

शब्द वाक्य में प्रयुक्त होकर पद बन जाते हैं। इस प्रकार शब्द-भेद पद-रचना की विविधता को आधार-प्रदान करता है।

यास्क ने निरुक्त में पद को चार वर्गों में विभक्त किया है–

"चत्वारि पदजातानि नामाख्याते चोपसर्गनिपाताश्च।"

यास्क द्वारा दिए गए पदों की व्यवस्था को इस प्रकार दर्शा सकते हैं–

1. नाम–(संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण) प्रमोद, तुम, सुंदर।
2. आख्यात–(क्रिया)–पढ़ना, हँसना।
3. उपसर्ग–(संबद्ध अव्यय) उप, निर्, प्र।
4. निपात–(अव्यय शब्द) और, वा।

हिंदी के प्रसिद्ध वैयाकरण पं. कामताप्रसाद गुरु ने हिंदी पदों को निम्नलिखित वर्गों में रखकर विवेचन किया है–

1. **संज्ञा पद**–वाक्य में प्रयुक्त जिस शब्द से किसी व्यक्ति, वस्तु या स्थान का बोध हो, उसे संज्ञा पद कहते हैं; यथा–**शरद** कल **दिल्ली** जा रहा है। इस वाक्य में 'शरद' और 'दिल्ली' संज्ञा है।

2. **सर्वनाम पद**–वाक्य में जिस शब्द का प्रयोग संज्ञा के स्थान पर किया जाता है, उसे सर्वनाम पद कहते हैं; यथा–**आप** आज कहाँ जा रहे हैं? इस वाक्य में 'आप' सर्वनाम पद है।

3. **विशेषण**–वाक्य में प्रयुक्त जिस शब्द से संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता प्रकट हो, उसे विशेषण पद कहते हैं; यथा–यह **सुंदर** फूल मुझे अपनी ओर खींच रहा है। यहाँ 'सुंदर' विशेषण है।

4. **क्रिया विशेषण**–वाक्य का जो पद क्रिया पद की विशेषता प्रकट करता है, उसे क्रिया विशेषण पद कहते हैं; यथा–वह **तेज़** दौड़ रहा है। इस वाक्य में 'दौड़ रहा है' क्रिया पद की विशेषता 'तेज़' पद बता रहा है। इसलिए 'तेज़' क्रिया विशेषण है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

5. क्रिया पद–भाषा में क्रिया पद का सर्वाधिक महत्त्व होता है। वाक्य में जिस पद से किसी कार्य के होने या करने का बोध होता है, उसे क्रिया पद कहते हैं। यथा–सुनीता **हँस रही है**। इस वाक्य में सुनीता के द्वारा हँसने की क्रिया का बोध हो रहा है। इसलिए 'हँस रही है' क्रिया पद है।

6. अव्यय पद–वाक्य में प्रयुक्त होनेवाले ऐसे पद जिनके स्वरूप में परिवर्तन नहीं होता, उन्हें अव्यय पद की संज्ञा देते हैं। इस वर्ग में समुच्चय बोधक, संबंधबोधक और विस्मयादिबोधक पदों को स्थान दिया जाता है; यथा–वाह!, छिः, अच्छा!

जिस प्रकार मनुष्य की क्रिया से उसकी पहचान होती है, उसी प्रकार भाषा में क्रिया पद का सर्वाधिक महत्त्व है। यह निर्विवाद तथ्य है कि वाक्य में प्रत्यक्ष या परोक्ष क्रिया पद की अनिवार्यता होती है। संज्ञा वाक्य में कर्ता का कर्म के रूप में होने से इस पद का महत्त्व स्वतः स्पष्ट है। सर्वनाम और विशेषण संज्ञा पद पर आधारित होते हैं। क्रिया विशेषण पद क्रिया पर आधारित होता है।

वाक्य में सभी पदों की अपनी भूमिका होती है। इसीलिए सब का अपना महत्त्व होता है।

4.2 हिंदी समस्तपद

समस्तपद व्याकरणिक योग्यता प्राप्त भाषा की ऐसी इकाई है, जो पद से बड़ी और पदबंध से छोटी होती है। जब दो या दो से अधिक शब्द मिलकर एक सामासिक शब्द की रचना करते हैं, तो उसे समस्तपद कहते हैं। समस्तपद के दोनों शब्दों में कुछ संबंध होना आवश्यक है। समस्तपद के पूर्वांश को पूर्व पद और बाद के दूसरे अंश या शब्द को उत्तर पद कहते हैं; यथा–राजा का पुत्र > राजपुत्र। 'राजा' और 'पुत्र' दो शब्दों से बना समस्तपद 'राजपुत्र' एक स्वतंत्र शब्द है।

समस्तपद से पदबंध में प्रमुख भेद यह है कि वह वाक्य का एक भाग है और उसमें एकाधिक पद एक साथ मिलकर एक पद के रूप में प्रयुक्त होते हैं, जबकि समस्तपद में दो शब्दों से एक स्वतंत्र शब्द-रचना

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

होती है। पदबंध वाक्य का अंश होता है, जिसका विस्तृत रूप हो सकता है; यथा—राम वन गए, में 'राम' एक पद है। इसके साथ एकाधिक पद जोड़कर पदबंध बना सकते हैं—**'दशरथ के पुत्र राम'** या **'महाप्रतापी राजा दशरथ के पुत्र राम'**।

हिंदी की समस्तपद प्रक्रिया संस्कृत भाषा से आई है। संस्कृत भाषा सामासिक शैली के लिए प्रसिद्ध है। इसे भाषा की संश्लिष्ट प्रवृत्ति कहते हैं। वैसे हिंदी वियोगात्मक या असंश्लिष्ट भाषा है, किंतु इसमें प्रयत्नलाघव संबंधी व्यावहारिक दृष्टि से समस्त पदों का पर्याप्त रूप में प्रयोग होता है।

सभी भाषाओं में समस्तपद रचना हो सकती है, किंतु प्रत्येक भाषा के समस्तपदों की संरचना भिन्न और उनकी अपनी विशेषताएँ होती हैं।

समस्तपद के खंडों के आपसी संबंध को स्पष्ट करने के लिए उनको पृथक करते हैं। इस प्रक्रिया को 'समास-विग्रह' कहते हैं; यथा—

समस्तपद	**विग्रह**
घुड़दौड़	घोड़ों की दौड़
फुलवाड़ी	फूलों की वाड़ी

वर्गीकरण

समस्तपद की अर्थ अभिव्यक्ति में उनके दोनों अंशों—पूर्व पद तथा उत्तर पद की विशेष भूमिका होती है। समस्तपद में कभी पूर्वपद प्रधान होता है, तो कभी उत्तरपद। कभी दोनों पद समान रूप से प्रधान होते हैं; तो कभी दोनों से भिन्न कोई अन्य पद प्रधान होता है। इस आधार पर समस्तपद-रचना-प्रक्रिया को मुख्यतः चार भागों में विभक्त करते हैं—

1. अव्ययीभाव—जब समस्तपद का पूर्वपद अव्यय हो, तो इस पद की ही प्रधानता होती है। ऐसे में पूर्ण समस्तपद अव्यय के रूप में प्रयुक्त होता है; यथा—

प्रतिदिन	(दिन-दिन)
यथाशक्ति	(शक्ति के अनुसार)
आजन्म	(जन्म से लेकर)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अव्ययीभाव समस्तपद का प्रयोग क्रिया-विशेषण के रूप में होता है।

यह प्रतिदिन विद्यालय जाएगा।

मैं आपका कार्य यथाशक्ति करूँगा।

2. तत्पुरुष–जिस समस्तपद में अर्थ की दृष्टि से प्रथम पद गौण और उत्तर पद प्रधान हो उसे तत्पुरुष समस्तपद कहते हैं। ऐसे समस्तपद की संरचना में दोनों शब्दों के मध्य से परसर्गों का लोप हो जाता है। तत्पुरुष समस्त पद संरचना के चार भेद हैं–

(क) लुप्त पद तत्पुरुष–जब दो शब्दों के मध्य के शब्द लुप्त हो जाते हैं; यथा–

पनचक्की – पानी से चलने वाली चक्की

रेलगाड़ी – रेल पर चलने वाली गाड़ी

(ख) नञ् तत्पुरुष–जब अभाव या निषेध अर्थ प्रकट करने के लिए पूर्व पद रूप में 'अ' या 'न' का प्रयोग करते हैं; यथा–

अस्थिर – न स्थिर

अनश्वर – न नश्वर

अनावश्यक – अन आवश्यक

(ग) कर्मधारय–इस समस्तपद का उत्तर पद प्रधान होता है। पूर्व पद विशेषण तथा उत्तर पद विशेष्य होता है; यथा–

लालटोपी – लाल है जो टोपी

नीलकमल – नीला है जो कमल

(घ) द्विगु–इस समस्तपद का पूर्व पद संख्या वाचक होता है। विशेषण-विशेष्य भाव के साथ समस्तपद समूहवाची भी होता है–

नौरत्न – नौ रत्नों का समाहार (समूह)

चौराहा – चार राहों का समूह

अठन्नी – आठ आनों का समूह

3. द्वंद्व–जब दो समान रूपी प्रधान पदों के प्रयोग से समस्तपद की रचना हो, तो द्वंद्व समस्तपद होगा। पूर्व तथा उत्तर पदों के मध्य से समुच्चय बोधक अव्यय का लोप कर दिया जाता है; यथा–

माता-पिता – माता और पिता

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

चार-पाँच — चार या पाँच
नर-नारी — नर और नारी

4. बहुव्रीहि–जिस समस्तपद की रचना में पूर्व और उत्तर दोनों पद गौण हों, साथ ही कोई अन्य पद प्रधान हो, तो बहुब्रीहि समस्तपद संरचना होगी; यथा–

नीलकण्ठ — नीला है कंठ जिसका (शिव)
दशानन — दस हैं आनन जिसके (रावण)
लंबोदर — लंबा है उदर जिसका (गणेश)

हिंदी भाषा में समस्तपद की रचना मुख्यतः प्रयत्नलाघव की देन है। समस्तपद के पूर्व तथा उत्तर पद प्रायः एक भाषा-स्रोत के शब्दों पर आधारित होते हैं, किंतु यदा-कदा भिन्न स्रोत के शब्दों से भी ऐसी रचना हो जाती है; यथा–रेलगाड़ी, डाकघर।

हिंदी में समस्तपद के दोनों (पूर्व और उत्तर) पदों को एक शिरोरेखा से लिखते हैं। दोनों पदों की प्रधानता पर बीच में योजक (-) चिह्न का प्रयोग करते हैं।

4.3 अर्थ : परिभाषा एवं शब्द-अर्थ संबंध

1. अर्थ : परिभाषा : जिस प्रकार शरीर की चैतन्यता का आधार आत्मा है, उसी प्रकार भाषा की प्राणवंतता अर्थ से है। इस प्रकार कह सकते हैं, "भाषा की आत्मा अर्थ है।" महर्षि पतंजलि ने अर्थ को शब्द की आंतरिक शक्ति के रूप में स्वीकार किया है।

शब्द की संरचना में प्रयुक्त ध्वनि-अक्षर और वर्णादि उसकी शारीरिक इकाइयाँ हैं, तो अर्थ शब्द की आत्मा है।

इसी शब्दार्थ-शक्ति से आंतरिक हर्ष-विषाद भाव व्यक्त किए जाते हैं, तो संसार का सारा व्यवहार इसी पर टिका है।

2. शब्द-अर्थ संबंध : कविकुल गुरु कालिदास ने शिव-पार्वती के संदर्भ से शब्द-अर्थ के संबंध को स्पष्ट करते हुए कहा है–

वागर्थाविव सम्पृक्तौ वागर्थ प्रतिपत्तये।
जगतः पितरौ वन्दे पार्वती परमेश्वरौ॥

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

अर्थात् "जिस प्रकार वाणी और अर्थ आपस में जुड़े हुए और अन्योन्याश्रित हैं उसी प्रवृत्ति के संसार के माता-पिता पार्वती और शिव की मैं वंदना करता हूँ।"

यदि 'कलम' शब्द पर विचार करें, तो कलम शब्द और 'कलम' वस्तु में अभेद दिखाई देता है; यथा—'यह कलम है', 'कलम काली है'।

यहाँ 'कलम' शब्द और 'कलम' वस्तु के पृथक रूप का आभांस नहीं होता है। कभी-कभी तो यह भेद करना कठिन हो जाता है कि शब्दों पर विचार हो रहा है अथवा शब्द के द्वारा किसी वस्तु पर। वास्तव में शब्द से निर्दिष्ट वस्तु का ज्ञान होता है, किंतु शब्द वस्तु आदि से भिन्न है। विचारणीय है कि क्या काले रंग वाली निब से युक्त, सुनहरी टोपी वाली कलम ही 'कलम' शब्द है? उक्त निर्दिष्ट वस्तु कलम है। यहाँ काला रंग भी कलम शब्द से पूर्ण भिन्न उस वस्तु (कलम) का गुण है।

शब्द-अर्थ पर सूक्ष्म चिंतन करने से यह ज्ञात होता है कि शब्द के द्वारा पहले उसका निजी भाषाई स्वरूप प्रकट होता है और उसके पश्चात उसका अर्थ-बोध होता है। इस प्रकार शब्द और अर्थ का अभिन्न संबंध स्पष्ट होता है। यहाँ पर यह भी ज्ञातव्य है कि 'कलम' कहने से 'काग़ज' 'पुस्तक' या अन्य किसी वस्तु का बोध नहीं होता है। इससे यह भी स्पष्ट होता है कि प्रत्येक शब्द से विशिष्ट अर्थ की प्रतीति होती है। यही कारण है कि वक्ता और श्रोता प्रायः एक शब्द से एक ही अर्थ ग्रहण करते हैं। शब्दों का अर्थ जन-सामान्य द्वारा स्वीकृत होता है। यदि जन-सामान्य द्वारा 'फूल' या अन्य किसी शब्द का भिन्न कोई अर्थ मान लिया जाए, तो वही अर्थ प्रकट होगा।

3. शब्द का उच्चरित स्वरूप और अर्थ-अभिव्यक्ति—शब्द में एकाधिक ध्वनियों की योजना होती है; यथा—'कमल' के उच्चारण में क् अ म् अ ल् पाँच ध्वनियाँ प्रयुक्त होती हैं। वक्ता इन ध्वनियों का क्रमशः उच्चारण करता है। 'क' उच्चारण और श्रोता के 'क' ग्रहण के बाद 'अ' का उच्चारण होता है। तब तक 'क' पूर्व उच्चरित ध्वनि लुप्त हो जाती है। इसी प्रकार म् अ ल् ध्वनियों का उच्चारण क्रमशः होता है और पूर्व की सारी ध्वनियाँ लुप्त हो चुकी होती हैं। मनुष्य के मस्तिष्क में शब्द की विभिन्न ध्वनियों

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

की समग्रता अंतिम ध्वनि के सुनते ही 'स्फोट' से सामने आ जाती है और अर्थ समझ में आ जाता है। जब एक शब्द का उच्चारण दो या दो से अधिक व्यक्ति करते हैं, तो उनके उच्चारण का आपसी अंतर स्पष्ट होता है। यह उच्चारण-भिन्नता ही वक्ता की जानकारी देती है। एक शब्द को चाहे जितने आदमियों द्वारा प्रयोग किया जाए, किंतु उनका समान ही अर्थ निकलता है। यह स्फोट गुण की विशेषता है।

4. **शब्द-अर्थ संबंध की चिंतन-परंपरा**–प्राचीन काल से ही शब्द और अर्थ के संबंध पर विचार होता रहा है। **पतंजलि** ने अर्थ को शब्द की आंतरिक शक्ति बताते हुए शब्द और अर्थ के संबंध को नित्य कहा है, तो **भर्तृहरि** ने दोनों को एक ही आत्मा के दो रूपों में स्वीकार किया है। शब्द-अर्थ के विभिन्न चिंतन को निम्नलिखित वर्गों में रख सकते हैं।

(क) **उत्पत्तिवाद**–ऋग्वेद में प्रस्तुत प्राचीन मतानुसार मानव-मन में अर्थ विद्यमान होते हैं, जिनसे शब्द की उत्पत्ति होती है, अर्थात् शब्द उत्पाद्य है और अर्थ उत्पादक।

(ख) **अभिव्यक्तिवाद**–यह विचार महर्षि पतंजलि की देन-स्वरूप है। उनके अनुसार शब्द-प्रयोग से अर्थ की अभिव्यक्ति होती है– **"श्रोत्रोपलब्धिर्बुद्धिनिर्ग्राह्यः प्रयोगेणाभिज्वलितः आकाशदेशः शब्दः।"**

(ग) **प्रतीकवाद**–भर्तृहरि के अनुसार शब्द के प्रतीक रूप से विभिन्न वस्तुओं या पदार्थों की प्रतीति होती है। इस प्रकार शब्द और अर्थ में प्रतीकात्मक संबंध की बात सामने आती है।

(घ) **ज्ञाप्तिवाद**–वाजसनेयी के अनुसार शब्द से अर्थ की ज्ञाप्ति होती है। जिस प्रकार बहुत ठंडेपन से बर्फ का आभास होता है, उसी प्रकार शब्द से अर्थ का आभास होता है। इनके अनुसार शब्द ज्ञापक और अर्थ ज्ञाप्य है।

5. **अर्थ-प्रतीति**-अर्थ–प्रतीति के दो आधार हैं–आत्मानुभव और परानुभव।

(क) **आत्मानुभव** में अपने अनुभव के द्वारा शब्द के अर्थ की प्रतीति होती है; यथा–'रसगुल्ला' शब्द से एक मीठे स्वादिष्ट खाद्य-पदार्थ का ज्ञान होता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(ख) **परानुभव** में एक दूसरे के अनुभव पर विश्वास कर शब्द का अर्थ निश्चित करते हैं; यथा–'ज़हर' के विषय में लगभग सभी को पता होता है कि इसके खाने से प्राणांत हो जाता है, जबकि अनेक व्यक्ति ऐसे मिल जाएँगे जिन्होंने ज़हर देखा भी नहीं होगा। इस प्रकार ज़हर की अनुभूति परानुभव पर आधारित है।

4.4 अर्थ-परिवर्तन की दिशाएँ

भाषा की विभिन्न इकाइयों के सतत परिवर्तन के अनुसार विभिन्न शब्दों के अर्थ में परिवर्तन होता रहता है। शब्द के इस प्रकार अर्थ-परिवर्तन को विकास सिद्धान्त के आधार पर 'अर्थ-विकास' भी कहते हैं।

संस्कृत के विद्वान यास्क, पतंजलि तथा भर्तृहरि आदि ने शब्दार्थ-विकास पर विस्तार से चिंतन करते हुए अभिधा, लक्षणा तथा व्यंजना शक्तियों के माध्यम से शब्दार्थ-परिवर्तन की दिशाएँ निश्चित की हैं।

भाषाविज्ञान में इस दिशा पर नए ढंग से चिंतन किया गया है। इस विषय में फ्रांसीसी विद्वान 'ब्रील' का नाम बहुचर्चित है। उन्होंने अर्थ-विकास की तीन दिशाएँ निश्चित की हैं। यह दिशा-निर्धारण शब्द के पूर्ववर्ती और परवर्ती अर्थ-भिन्नता के आधार पर किया गया है, अर्थात् कुछ शब्दों के अर्थ एक समय कुछ होते हैं, तो परवर्ती काल में कुछ और हो जाते हैं। अर्थ-विकास की निम्नलिखित दिशाएँ सामने आती हैं–

1. अर्थ-विस्तार–अर्थ-विस्तार का सामान्य भाव है–अर्थ क्षेत्र का विस्तृत होना। जब कोई शब्द एक समय सीमित अर्थ में प्रयुक्त होता रहा हो और बाद में उसकी अर्थ-सीमा का विस्तार हो जाए, तो उसे अर्थ-विस्तार कहते हैं; यथा–

तेल–संस्कृत में एक विशेष तिलहन 'तिल' के तरल पदार्थ को तेल कहते हैं। कहा भी गया है, "तिले तैलमस्ति।" इस शब्द के अर्थ में धीरे-धीरे विस्तार हुआ। आज सरसों, मूँगफली, सोयाबीन, नारियल, मछली आदि से तैयार किए गए तरल पदार्थ को तेल कहते हैं। मिट्टी का तेल अपनी उपयोगिता के आधार पर सर्वविदित है। अधिक परिश्रम के संदर्भ में प्रयुक्त होने वाले मुहावरे में मनुष्य के तेल निकालने की बात कही जाती है–'मालिक

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

ने मेरा तेल निकाल दिया।'

कुशल—संस्कृत में तीक्ष्ण अग्रभाग वाली एक विशेष घास 'कुश' को सावधानी से उखाड़ने वाले को कुशल कहते थे। यह कार्य बहुत कठिन होता है। इसे उखाड़ने में पूरी सावधानी और चातुर्य की आवश्यकता होती है। आज इसका अर्थ चतुरता या निपुणता से लिया जाता है। खेल में कुशल, कला में कुशल व व्याख्यान में कुशल आदि संदर्भों में इसका प्रयोग करते हैं।

स्याही—इसका प्रारंभिक अर्थ था—काली। प्रारंभ में लकड़ी के कोयले को पानी में रगड़कर लिखने के लिए जो काला तरल पदार्थ बनाया गया उसे स्याही कहते थे। आज लाल, नीली, गुलाबी आदि रंगों की स्याही मिलती है।

इसी प्रकार प्रवीण, गोशाला, गवेषणा (गाय ढूंढ़ना), जटिल, सब्ज़ी आदि शब्दों का अर्थ-विस्तार हुआ है।

2. अर्थ-संकोच

अर्थ-संकोचन की प्रक्रिया अर्थ-विस्तार के पूर्ण विपरीत है। जब किसी शब्द का पूर्ण-विस्तृत अर्थ परवर्ती काल में संकुचित रूप में प्रयुक्त होने लगता है, तो उसे अर्थ-संकोच कहते हैं; यथा—

मृग—प्राचीन संस्कृत में मृग का अर्थ जंगली जानवर था, जिसके अंतर्गत सभी वन्य पशु आ जाते थे। पशुओं में श्रेष्ठ 'शेर' को इसलिए मृगेन्द्र, मृगपति या मृगराज कहते हैं। यह अर्थ इससे भी स्पष्ट होता है—"खग-मृग बसत अरोग्य बन, हरि अनाथ के नाथ।" वर्तमान समय में इसका अर्थ संकुचित होकर मात्र 'हरिण' रह गया है।

सर्प—सर्प शब्द का निर्माण सृप् धातु से हुआ है। इस शब्द का अर्थ है—रेंगने वाले जीव, जिसके अंतर्गत केंचुआ, साँप आदि सभी रेंगने वाले जीव आ जाते हैं। वर्तमान समय में इसका प्रयोग मात्र साँप के लिए होता है।

मंदिर—संस्कृत में मंदिर शब्द का प्रयोग विस्तृत रूप में घर, राजमहल, देवालय आदि के लिए होता था। हिंदी में इस शब्द का प्रयोग केवल देवालय

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

या आराधना-गृह के लिए होता है।

इसी प्रकार वृषभ (बैल, साँड़, रुद्रदेव) और जलज (कमल, मेंढ़क, मछली) आदि शब्दों के अर्थ में संकोच हो गया है।

3. अथदिश

अथदिश का सामान्य अर्थ है—एक अर्थ के स्थान पर दूसरे अर्थ का प्रचलन अर्थात् जब कोई शब्द पहले एक अर्थ में प्रचलित हो और बाद में किसी अन्य अर्थ में प्रयुक्त होने लगता है; यथा—

साहस शब्द प्राचीन संस्कृत में चोरी, डकैती और व्यभिचार-संदर्भ में उत्साह दिखाने के अर्थ में प्रयुक्त होता था, आज इसका प्रयोग अच्छे कार्यों के संदर्भ में उत्साह दिखाने में होता है।

अथदिश को दो भागों में विभक्त कर सकते हैं—

(क) **अर्थोत्कर्ष**—अर्थोत्कर्ष शब्द की रचना अर्थ और उत्कर्ष दो शब्दों का योग से हुई है।

जब कोई शब्द प्रारंभ में निम्न या विकृत अर्थ में प्रयुक्त होता रहा हो और बाद में उच्च या उत्कृष्ट अर्थ में प्रयुक्त होने लगता है, तो उसे अर्थ-विकास की अर्थोत्कर्ष दिशा कहते हैं। इसमें शब्दार्थ का भावात्मक रूप उत्कर्ष प्राप्त करता है; यथा—

कर्पट—संस्कृत में 'कर्पट' शब्द का प्रयोग फटे-पुराने, जीर्ण-शीर्ण वस्त्र के संदर्भ में किया जाता था, वर्तमान समय में कर्पट से बना 'कपड़ा' शब्द अच्छे वस्त्र के अर्थ में भी प्रयुक्त होता है।

मुग्ध—संस्कृत में इस शब्द का प्रयोग मूर्ख के अर्थ में होता था। धीरे-धीरे इसके अर्थ में परिवर्तन आया और मोहित, आकर्षित और भोलेपन के अर्थ में प्रयुक्त होने लगा है।

सभ्य—इस शब्द का प्रयोग पहले 'सभा में बैठने' वाले के अर्थ में होता था। सभा में सभ्य और असभ्य दोनों प्रकार के व्यक्ति हो सकते हैं। इसके अर्थ में उत्कर्ष आया और यह शब्द सुसंस्कृत व्यक्ति के संदर्भ में प्रयुक्त होने लगा है।

इसी प्रकार साहस, गोष्ठी (गोशाला > सभ्य लोगों की बैठक), फिरंगी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

(डाकू > यूरोपियन) आदि शब्दों में अर्थोत्कर्ष देख सकते हैं।

(ख) **अर्थापकर्ष**–अर्थापकर्ष शब्द की संरचना 'अर्थ' और 'अपकर्ष' दो शब्दों के योग से हुई है।

अर्थ-विकास की यह प्रक्रिया अर्थोत्कर्ष के ठीक विपरीत है। जब कोई शब्द पहले उच्च या अच्छे अर्थ में प्रयुक्त हो और बाद में निम्न अर्थ में प्रयुक्त होने लगे, तो उसे अर्थापकर्ष कहेंगे; यथा–

असुर–यह शब्द वैदिक साहित्य में देवता के अर्थ में प्रयुक्त होता था, आज इसका प्रयोग राक्षस के अर्थ में होता है।

अभियुक्त–संस्कृत में अभियुक्त का अर्थ था–प्रामाणिक पुरुष, किंतु वर्तमान समय में इसका प्रयोग अपराधी के अर्थ में होता है।

पाषंडी–अशोककालीन भारत में एक विशेष संप्रदाय 'पाषंडी' का उदय हुआ था। इस संप्रदाय वालों पर विशेष श्रद्धा होने से, उन्हें श्रद्धा से दान दिया जाता था। आज पाषंडी का अर्थ परिवर्तित होकर ढोंगी या दिखावा करने वाला हो गया है।

इसी प्रकार चतुर्वेदी–चौबे (चारों वेदों का ज्ञाता > अधिक खाने वाला), मधुर > माहुर, भद्र > भद्दा, आबदस्त (नमाज पढ़ने से पूर्व-हस्तशुद्धि का जल > शौचालय का जल) आदि शब्दों में अर्थापकर्ष देख सकते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

5

नागरी लिपि

5.1. नागरी लिपि का वर्तमान स्वरूप

भारत की राजभाषा और राष्ट्रभाषा हिंदी की भी लिपि नागरी है। वर्तमान समय में दो अथवा दो से अधिक भाषा-भाषियों के भाव आदान-प्रदान के लिए नागरी लिपि का प्रयोग संपर्क लिपि के रूप में किया जाता है। देवनागरी के बढ़ते प्रयोग-संदर्भ को दृष्टिगत कर इसमें अपेक्षित सुधार किए गए हैं। सुधार-प्रक्रिया के आधार पर यह लिपि पर्याप्त वैज्ञानिक हो गई है।

वर्तमान समय की देवनागरी का स्वरूप पर्याप्त अनुकूल और वैज्ञानिक हो गया है, जिसमें भाषाविदों और संस्थाओं के साथ केंद्रीय हिंदी निदेशालय की विशेष भूमिका रही है।

वर्णमाला

स्वर – अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ
स्वर-मात्रा – ा ि ी ु ू ृ े ै ो ौ
आगत स्वर – ऑ (ॉ)
अयोगवाह – अनुस्वार (ं)
विसर्ग (:)
अनुनासिकता – (ँ)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

व्यंजन

कंठ्य	क	ख	ग	घ	ङ		
तालव्य	च	छ	ज	झ	ञ		
मूर्द्धन्य	ट	ठ	ड	ढ	ण	ड़	ढ़
दंत्य	त	थ	द	ध	न		
ओष्ठ्य	प	फ	ब	भ	म		
अंतस्थ	य	र	ल	व		ल	
ऊष्म	श	ष	स	ह			

अंकमाला

देवनागरी (मूल) अंक	०	१	२	३	४	५	६	७	८	९
अंतरराष्ट्रीय रूप	0	1	2	3	4	5	6	7	8	9

वर्तमान समय की आवश्यकता के आधार पर संशोधित की गई यह मानक वर्णमाला है। नागरी वर्णमाला को मुख्यतः स्वर और व्यंजन दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं।

नागरी लिपि के चिह्नों को इन उपवर्गों में रखकर विवेचन कर सकते हैं :

1. स्वर—नागरी में कुछ समय पूर्व तक दस स्वरों को ही मान्यता दी गई थी। वर्तमान समय में 'ऋ' की अनिवार्यता को दृष्टिगत कर इसे पुनः अपना लिया गया है। कुछ समय पूर्व तक वर्णमाला में स्थान न देने का मुख्य कारण था कि 'ऋ' का प्रयोग लेखन में चलता रहा, किंतु बाद में उच्चारण व्यंजन 'रि' के बहुत कुछ समान हो जाना रहा है। लिपि का संबंध लेखन से है और 'ऋ' के प्रयोग से ही शुद्धता संभव है। इसलिए इसे अपनाकर स्वरों की संख्या ग्यारह की गई है। स्वरों को क्रमशः इस प्रकार लिख सकते हैं—

अ आ इ ई उ ऊ ऋ ए ऐ ओ औ

स्वरों के स्वरूप को दो वर्गों में व्यवस्थित कर सकते हैं। प्रथम में उनका मूल रूप; यथा अ, आ...औ और द्वितीय में उनकी मात्राओं का समूह। अ स्वर की मात्रा नहीं होती क्योंकि इसके आधार पर ही सभी व्यंजन वर्णों की रचना संभव होती है; जैसे—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

क = क् + अ   ख = ख् + अ आदि

अ से इतर अन्य प्रत्येक स्वर की स्पष्ट और एक मात्रा की व्यवस्था है–

आ - ा इ - ि ई - ी
उ - ु ऊ - ू ऋ - ृ
ए - े ऐ - ै ओ - ो
औ - ौ

2. आगत स्वर–वर्तमान समय की नागरी लिपि में अंग्रेज़ी का स्वर 'ऑ' अपना लिया गया है। अभी इसे नागरी की सामान्य वर्णमाला में स्थान नहीं मिल पाया है, किंतु व्यावहारिक रूप में प्रयोग होने लगा है, यथा–

डॉक्टर (Doctor) बॉल (Ball) –यहाँ पर यह द्रष्टव्य है कि इस स्वर चिह्न का प्रयोग मात्र आगत अंग्रेज़ी के शब्दों में ही होता है।

3. व्यंजन–नागरी के सामान्य व्यंजन-चिह्नों की संख्या 33 है। पहले नागरी वर्णमाला के अंतिम अंश में क्ष त्र और ज्ञ तीन संयुक्त वर्णों को भी स्थान प्राप्त था, किंतु अब इन्हें वर्णमाला से निकाल दिया गया है। इनकी अनावश्यकता ही इनके निकालने का मुख्य कारण है। संयुक्त वर्णों को स्वतंत्र वर्ण-चिह्नों के आधार से लिखा जा सकता है; यथा–

क्ष < क्ष   त्र > त्र   ज्ञ > ज्ञ

संस्कृत में मूर्द्धन्य ड़ और ढ़ ध्वनियाँ नहीं हैं, किंतु हिंदी में इनका पर्याप्त प्रयोग होता है। इस प्रकार नागरी में इन ध्वनियों के लिए लिपि-चिह्नों की व्यवस्था की गई है, किंतु इन्हें वर्णमाला में स्थान न देकर प्रयोग हेतु अस्तित्व स्वीकार किया गया है। इस रचना-प्रक्रिया में नागरी वर्णमाला के ड और ढ लिपि-चिह्नों के आधार पर ड़ और ढ़ बना लेते हैं। इन चिह्नों का प्रयोग भी खूब होता है; यथा–

सड़क, सड़ना, गढ़, बढ़ना।

नागरी को सर्वगुण आगरी बनाने के प्रयत्न में देखा गया है कि 'ळ' ध्वनि का वैदिक भाषा, मराठी और हिंदी की कुछ बोलियों में प्रयोग मिलता है। इसलिए इस ध्वनि को वर्तमान नागरी वर्णमाला में स्थान दिया गया है

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

नागरी में कण्ठ्य, तालव्य, मूर्द्धन्य, दंत्य और ओष्ठ्य वर्ग की पाँच-पाँच ध्वनियों के लिपि-चिह्न निर्धारित किए गए हैं। इन वर्गों के अंतिम लिपि-चिह्न नासिक्य ध्वनि के प्रतिनिधि हैं। अंत में अंतस्थ और ऊष्म वर्ग की चार-चार ध्वनियों के लिए लिपि-चिह्नों की व्यवस्था है।

4. नागरी अंक—किसी भी लिपि के मुख्यतः दो भाग किए जा सकते हैं। प्रथम वर्ण और द्वितीय अंक। इन दोनों के समुचित प्रयोग में लिपि का आदर्श प्रयोग मान सकते हैं। दुर्भाग्य है कि नागरी के सुंदर, आकर्षक और परंपरागत अंक-चिह्नों के होते हुए उनका प्रयोग न के बराबर हो गया है। नागरी के मूल अंक चिह्नों—० १ २ ३ ४ ५ ६ ७ ८ ९ के स्थान पर प्रायः देवनागरी अंतरराष्ट्रीय अंक चिह्नों—0 1 2 3 4 5 6 7 8 9 का प्रयोग किया जाता है। सरकार की भाषाई नीति का परिणाम है कि नागरी के मूल अंक-चिह्नों के प्रयोग-संदर्भ में उपेक्षा हो रही है। इस विषय में पुनिर्चिंतन की आवश्यकता है।

नागरी के मूल अंकों के प्रयोग का भविष्य उज्ज्वल हो गया है, क्योंकि वर्तमान कंप्यूटर युग में हिंदी के साथ, कंप्यूटर परम्परागत अंक-चिह्नों १ २ ३ ४ ५ ६ आदि को भी अपना चुका है।

5.2. नागरी लिपि की विशेषताएँ (वैज्ञानिकता)

भारत के संविधान में हिंदी को राजभाषा और नागरी को उसकी लिपि के रूप में मान्यता मिली है। माना सभी को अपनी वस्तु के समान अपनी भाषा और लिपि प्रिय होती है, किंतु यदि तटस्थ भाव से सोचें और वैज्ञानिक रूप में विवेचन करें, तो नागरी किसी भी अन्य लिपि से वैज्ञानिक सिद्ध होती है। किसी का सौंदर्य, उसकी विशेषता या वैज्ञानिकता किसी अन्य से तुलनात्मक आधार पर अधिक प्रभावी रूप में सामने आती है। इसलिए नागरी लिपि की अंतरराष्ट्रीय भाषा अंग्रेज़ी की लिपि—'रोमन' से तुलना करते हुए उनकी विशेषताओं की विवेचना की जाएगी।

नागरी लिपि की विशेषताओं को निम्नलिखित शीर्षकों के आधार पर रेखांकित कर सकते हैं—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

1. लिपि चिह्न-संख्या सामान्यतः यह कहा जाता है कि नागरी-चिह्नों की संख्या बहुत ज़्यादा है। नागरी के लिपि-चिह्नों की गणना इस प्रकार कर सकते हैं–

स्वर–अ, आ, इ......औ					=	11
स्वर–मात्रा ा, ि........ौ					=	10
व्यंजन क वर्ग–	क ख	– ङ	=	5		
च वर्ग–	च छ	– ञ	=	5		
ट वर्ग–	ट ठ	– ण	=	5		
त वर्ग–	त थ	– न	=	5	=	33
प वर्ग–	प फ	– म	=	5		
अंतस्थ–	य र	– व	=	4		
ऊष्म–	श ष	– ह	=	4		
अंक 0, 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9,					=	10
				योग	=	64

इस प्रकार सामान्य नागरी लिपि में 64 चिह्न हैं।

कुछ लोगों का सोचना है कि रोमन में 26 वर्ण + 10 अंक = 3 चिह्न हैं। यदि गंभीरता से सोचें, तो रोमन के चिह्नों की संख्या इस प्रक है–

• रोमन–बड़े अक्षर	A B C.......Z.	=	26
छोटे अक्षर	a b c..........z	=	26
अंक	0, 1, 2. 3......9	=	10
	योग	=	62

इस प्रकार तुलना करने से लगभग समान संख्या के चिह्नों से नाग की श्रेष्ठता सिद्ध होती है।

2. उपयोगी वर्गीकरण–नागरी लिपि के चिह्नों का वैज्ञानिक अ उपयोगी वर्गीकरण करके सर्वप्रथम स्वरों को और फिर बाद में व्यंजनों व्यवस्था में रखा गया है; यथा–

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

स्वर–अ आ इ ई.......औ।

व्यंजन–क ख ग घ......ह।

• रोमन के पाँच स्वरों a e i o u को व्यंजनों के मध्य रखा गया है : a b c d e f g h i j k....n o p......t u v ....z.

नागरी के व्यंजनों का स्थान-आधार पर किया गया वर्गीकरण भी विशेष उल्लेखनीय है। ध्वनि-उत्पादन प्रक्रिया के मुख्य स्थान क्रमशः कण्ठ, तालु, मूर्द्धा, दंत और ओष्ठ हैं। पाँच-पाँच व्यंजन वर्ण क्रमशः इन्हीं स्थानों से उच्चरित हैं यथा–

कंठ- कंठ्य – क ख ग घ ङ

तालु- तालव्य – च छ ज झ ञ

मूर्द्धा- मूर्द्धन्य – ट ठ ड ढ ण

दंत- दंत्य – त थ द ध न

ओष्ठ-ओष्ठ्य – प फ ब भ म

इसी प्रकार वर्णों के प्राणत्व और घोषत्व आदि आधारों के श्रेष्ठ वर्गीकरण सामने आते हैं।

3. लिपि-चिह्न नाम और प्रयोग में अनुरूपता–नागरी के चिह्नों के नाम शब्द-प्रयोग में भी समान रहते हैं, अर्थात नागरी के चिह्न का नाम जो स्वतंत्र रूप में लिया जाता है, शब्द में उसका प्रयोग चाहे प्रारंभ में, मध्य में अथवा अंत में हो, वही उच्चारण रहता है; यथा–

क – कमल, पकड़, रोहतक।

त – तपन, पतन, चपत।

• रोमन के चिह्नों का स्वतंत्र नाम प्रयोग में प्रायः बदल जाता है; यथा–

B (बी) – Bag — बैग

F (एफ) – Fan — फैन

C (सी) – Cat — कैट

H (एच) – House — हाउस

4. एक ध्वनि के लिए एक वर्ण-चिह्न–नागरी लिपि में एक वर्ण के उच्चारण संदर्भ में प्रायः एक चिह्न की व्यवस्था है; यथा–'चमन' शब्द में

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

'च' 'म' और 'न' तीन ध्वनियों वाले वर्ण हैं। इन तीनों के लिए ये ही तीन चिह्न हैं। इन तीन वर्णों को कोई भी बोले और किसी भी शब्द में बोले इनके लिए ये ही चिह्न प्रयुक्त होंगे।

रोमन चिह्नों के सन्दर्भ में एक ध्वनि के लिए कई चिह्न प्रयुक्त होते हैं; यथा; क़ >K (के) Kite-काइट (पतंग)

C (सी) Cat-कैट बिल्ली

Ch (सीएच) Chemistry-कमेस्ट्री (रसायन विज्ञान)

Ck (सीके) Back-बैक (पीछे)

que (क्यूयूई) Cheque-चेक (चेक)

इस प्रकार नागरी की वैज्ञानिकता स्पष्ट होती है।

5. एक लिपि-चिह्न के लिए एक ध्वनि—नागरी लिपि की यह प्रमुख विशेषता है, जिसके आधार पर किसी भी लिपिबद्ध भाव को सरलता से पढ़ा जा सकता है। नागरी के प्रायः प्रत्येक चिह्न के लिए एक ही उच्चारण है; यथा—'प' वर्ण को चाहे जितने व्यक्ति से बोलने को कहें, तो उच्चारण एक समान ही होगा। शब्द में आगे, मध्य या पीछे कहीं भी लिपिबद्ध होने पर भी इसका उच्चारण यही रहेगा। इसके लिए अन्य कोई उच्चरित विकल्प नहीं है; यथा—पराया, सपना, आप शब्दों में 'प' चिह्न का लगभग समान उच्चारण है।

● रोमन लिपि में चिह्नों के प्रयोग के अनुसार उच्चारण बदल जाता है अर्थात् रोमन में चिह्नों के प्रयोग के बाद विविधता आ जाती है; यथा :

A (ए) अ > Affirm (अफ्फम)— निश्चय पूर्वक कहना

आ – Car (कार- क् आर) कार

ए – Rate (रेट- र् एट) नियत मूल्य

ऐ – At (ऐट ऐ ट) पर

6. ह्रस्व-दीर्घ मात्रा-व्यवस्था—कुछ लोग नागरी की मात्रा-व्यवस्था पर उँगली उठाते हैं और मात्रा-व्यवस्था को नागरी की दुरूहता और समस्या बताते हैं। वास्तव में नागरी की ह्रस्व और दीर्घ मात्राओं की व्यवस्था स्पष्ट अभिव्यक्ति का महत्त्वपूर्ण आधार है। मात्रा के इस भेद के आधार पर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लिखे हुए को स्पष्ट पढ़ा जा सकता है और बोले हुए को स्पष्ट लिखा जा सकता है; यथा–

तन, तना, तान, ताना।

रम, रमा, राम, रामा।

इसी प्रकार तीन वर्णों क, म, और ल में आ की मात्रा 'ा' के प्रयोग से स्पष्ट रूप बनाए जाते हैं–

'ा' मात्रा प्रयोग–कमल, कामल, कमाल, कमला, कामाल, कमाला, कामला, कामाला।

● यदि रोमन में तीन ह्रस्व क म ल वर्णों को लिपिबद्ध करें, तो तीनों वर्णों K M और L के साथ A के सिद्धांत से प्रयोग होना चाहिए। इस प्रकार प्रथम शब्द कमल को KAMALA लिखा जाएगा। रोमन में अन्य सातों शब्दों के लेखन की समस्या होगी। इस प्रकार नागरी की मात्रा-व्यवस्था स्पष्टता के लिए वरदान स्वरूप है।

7. आक्षरिकता–कुछ लोगों का आक्षेप है कि नागरी के व्यंजन लंगड़े हैं, क्योंकि स्वर के बिना इनका अस्तित्व ही नहीं है। यह विचार इसलिए आया है कि व्यंजन के साथ स्वर का होना अनिवार्य है। वास्तव में स्वर-प्रधान नागरी लिपि की यह विशेषता है। वह लिपि श्रेष्ठ मानी जाती है, जिसके प्रयोग में अपेक्षाकृत कम समय, कम शक्ति, कम स्थान और कम खर्च या अर्थ लगे एवं अभिव्यक्ति स्पष्ट हो। नागरी की आक्षरिकता उसे इन गुणों से संपन्न करती है; उदाहरणार्थ–दो शब्दों को ध्वन्यात्मक और आक्षरिक रूपों में लिख कर परीक्षण करते हैं–

आक्षरिक रूप		**ध्वन्यात्मक रूप**
मन	–	म् अ न् अ
कलम	–	क् अ ल् अ म् अ

'मन' और 'कलम' दो शब्दों के आक्षरिक लेखन में लगने वाले कम समय, स्थान, शक्ति और खर्च को देख कर इनकी प्रयोग-सरलता स्पष्ट हो जाती है।

रोमन ध्वन्यात्मक लिपि है इसलिए प्रायः अधिक चिह्नों का प्रयोग करना पड़ता है। नागरी के महाप्राण वर्गों की आक्षरिकता और रोमन-लेखन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

को देखें, तो नागरी की सरलता, स्पष्टता और वैज्ञानिकता सुस्पष्ट हो जाती है—

चमचम — CHAMACHAMA

छम छम — CHHAMA CHHAMA

नागरी लिपि की विशेषताओं के विवेचन से यह स्पष्ट हो जाता है कि यह एक वैज्ञानिक लिपि है। नागरी में किसी भी भाव को लिपिबद्ध किया जा सकता है और इस लिपि के लेखन को सरलता से पढ़ कर स्पष्ट रूप में भाव-ग्रहण किया जा सकता है।

5.3. नागरी लिपि का मानकीकरण

नागरी लिपि पर्याप्त वैज्ञानिक लिपि है। जिस प्रकार संपन्न और प्रतिष्ठित व्यक्ति को भी समय—परिस्थिति के परिवर्तन और आवश्यकता के संदर्भ में कुछ न कुछ अभाव अवश्य लगता है। इसी प्रकार नागरी लिपि में भी समय—परिस्थिति के परिवर्तन और भूमंडलीकरण में विभिन्न भाषाओं के लेखन-संदर्भ में कुछ निम्नताओं का ज्ञान होता है। इन्हीं निम्नताओं को दूर करने की प्रक्रिया को मानकीकरण कहते हैं और इस प्रयास से विकसित रूप को मानक नागरी लिपि कहते हैं।

नागरी लिपि के मानकीकरण संदर्भ में प्रथम नाम मुंबई के गोविंद राणा डे का नाम लिया जाता है। इस क्रम में महात्मा गाँधी, विनोबा भावे, काका कालेलकर, केशव राम, काशी प्रसाद शास्त्री, श्रीनिवास, डॉ. धीरेंद्र वर्मा, डॉ. उदय नारायण तिवारी, डॉ. भोलानाथ तिवारी, डॉ. कैलाश चंद्र भाटिया आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

नागरी लिपि के मानकीकरण-संदर्भ में विभिन्न संस्थाओं, प्रादेशिक सरकारों और केंद्र सरकार की भूमिकाएँ भी रेखांकन योग्य हैं। इनमें सन् 1941 में हिंदी साहित्य सम्मेलन, प्रयाग द्वारा और सन् 1945 में नागरी प्रचारिणी सभा, काशी द्वारा आयोजित नागरी लिपि सुधार समितियों के सुझावों का विशेष महत्त्व है।

उत्तर प्रदेश सरकार द्वारा जुलाई 1947 और नवंबर 1953 में क्रमशः

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आचार्य नरेंद्र देव और देश के उपराष्ट्रपति डॉ. राधाकृष्णन की अध्यक्षता में नागरी लिपि सुधार समितियों में महत्त्वपूर्ण निर्णय लिए गए।

इनके अतिरिक्त महाराष्ट्र साहित्य परिषद, पुणे; पंजाब हिंदू महा सभा; दक्षिण भारत हिंदी प्रचार सभा, मद्रास; राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, वर्धा; बिहार राष्ट्रभाषा परिषद् पटना और हिंदी प्रचार परिषद्, बंगलौर की नागरी की सुधार प्रक्रिया भी सराहनीय रही है।

नागरी के मानकीकरण की प्रक्रिया को समग्रता से इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं–

(अ) **वर्ण संबंधी मानकीकरण**–जिस लिपि-व्यवस्था में अनुकूल चिह्न संख्या और प्रत्येक ध्वनि के लिए एक स्पष्ट लिपि-चिह्न हो उसे वैज्ञानिक लिपि मानते हैं। नागरी लिपि अन्य किसी भी लिपि की तुलना में वैज्ञानिक लिपि है, किंतु इसमें भी कुछ न्यूनताएँ रही हैं। इन न्यूनताओं को दूर करने का सतत प्रयास किए गए हैं।

1. रकार के लिए चार चिह्नों का प्रयोग–नागरी में 'रकार' के लिए व्यवहार में चार चिह्नों का प्रयोग किया जाता है; जबकि वर्णमाला में मात्र एक 'र' चिह्न है। रकार के लिए प्रयुक्त चिह्न इस प्रकार हैं–

र – रखना, रत्न, राम।
/ – क्रम, भ्रमर, नम्र
‸ – ट्राम, ड्रम, ड्रामा।
ॅ – कर्म, धर्म, मर्म।

रकार चिह्न के मानकीकरण के विषय में भाषा-वैज्ञानिकों का सुझाव है कि इन चार चिह्नों के स्थान पर मात्र 'र' चिह्न का प्रयोग करना चाहिए; यथा–

रखना क्रम > क्‌रम
ट्राम > ट्‌राम, कर्म > कर्‌म

ऐसा करने से जहाँ चार चिह्नों की समस्या का समाधान हो जाएगा, वहीं लेखन में स्पष्टता आ जाएगी। 'रकार' के चार रूपों को देखने से 'र' एक चिह्न पूरा (पूर्ण) और शेष तीनों आधे लगते हैं, जबकि र, /, ‸ तीनों चिह्न पूरे हैं, मात्र ॅ चिह्न अर्ध है। एकरूपता में पूर्ण और अर्ध चिह्नों का स्पष्ट ज्ञान हो जाता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

2. एक वर्ण के लिए दो-दो चिह्नों के प्रयोग–नागरी के कुछ वर्णों के लिए दो-दो चिह्नों के अल्पाधिक रूप में प्रयोग मिलते हैं; यथा–

अ-ऋ, झ-भ, ण-रा, ल-ल, श-श आदि।

इस समस्या का समाधान कर नागरी को मानक रूप प्रदान करने के लिए अ, झ, ण, ल और श को सरलता और बहुप्रचलन आधार पर अपनाना होगा और दूसरे रूपों को छोड़ना होगा।

3. दो चिह्नों का आपस में भ्रामक स्वरूप–श्रेष्ठ लिपि में चिह्नों की स्पष्टता अनिवार्य होती है। नागरी के कुछ दो वर्णों के चिह्न आपस में इतने समान हैं कि पहचान में संकट उत्पन्न करते हैं; यथा–

घाम (घाम), घाम (धाम)

मार (भार), मार (मार)

नागरी का शिरोरेखा विहीन प्रयोग भी होने लगा है। शिरोरेखा न लगाने पर धाम (धूप) और धाम (घर) में 'घ' और 'ध' एक समान होकर अस्पष्ट हो गए हैं। इसी प्रकार 'भ' और 'म' में शिरोरेखा न होने से अस्पष्टता आ गई है।

इन चिह्नों के मानकीकरण के लिए ध और भ को घुंडीदार 'ध' और 'भ' बना देने से शिरोरेखा सहित लेखन हो या शिरोरेखा विहीन लेखन हो, दोनों में स्पष्टता रहेगीः यथा–

घाम–धाम, भार–मार। –शिरोरेखा सहित (लेखन)

धाम–धाम, भार–मार। –शिरोरेखा विहीन (लेखन)

● इसी प्रकार ख–ख दो भिन्न रूप 'ख' और 'रव' हैं? समझ पाना असंभव हो जाता है। इसके लिए 'ख' को बिना कलम उठाए दोनों भागों को एक साथ मिला कर लिखना होगा–'ख'। इस प्रकार दोनों चिह्न पूर्ण स्पष्ट हो जाएँगे; यथा–ख–रव।

कुछ समय पूर्व 'ण' के लिए रा' चिह्न का प्रयोग किया जाता था। ऐसे में आधा वर्ण (रा) और 'रा' में संदेह होता रहा है; यथा–अराडा–अराडा। अब 'रा' का प्रयोग लगभग समाप्त हो चुका है। अर्थात 'ण' का ही प्रयोग मानकीकरण का आधार बन गया है। यहाँ दोनों शब्दों में स्पष्टता भी आ गई है–अण्डा-अराडा।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

4. संयुक्त वर्ण का प्रयोग—पहले नागरी वर्णमाला के व्यंजनों के अंतिम भाग में क्ष, त्र और ज्ञ तीन संयुक्त व्यंजनों को स्थान दिया जाता था। नागरी के मानकीकरण की प्रक्रिया में इन्हें वर्णमाला से निकाल दिया गया है। संयुक्त व्यंजनों के निकलने के दो कारण हैं। प्रथम—यदि 'क्ष त्र और ज्ञ' संयुक्त व्यंजनों को लिया जाता है, तो व्यवहार में आनेवाले त्त, द्म, द्य, श्र, ह्र, ह्न आदि को वर्णमाला में लेना होगा। इससे वर्णमाला के चिह्नों की संख्या बहुत बढ़ जाएगी। द्वितीय कारण यह रहा है कि सामान्य व्यक्ति के लिए यह स्पष्ट नहीं होता कि संयुक्त व्यंजन में कौन-सा वर्ण अर्ध है और कौन-सा पूरा।

नागरी के मानकीकरण में जहाँ तीनों संयुक्त व्यंजनों—क्ष, त्र और ज्ञ को वर्णमाला से निकाल दिया है, वहीं समस्त संयुक्त व्यंजनों को स्वतंत्र चिह्नों से लिखने का सुझाव दिया गया है; यथा—

क्ष (क्ष), त्र (त्‍र), ज्ञ (ज्‍ञ), त्त (क्त)
द्म (द्‌म), द्य (द्‌य) श्र (श्‍र), ह्न (ह्‌न)।

वैज्ञानिक लेखन और स्पष्टता की दृष्टि से यह मानकीकरण उपयोगी है, किंतु प्रयत्नलाघव या सरलता की दृष्टि से संयुक्त व्यंजन लेखन में कम समय, कम शक्ति, कम स्थान और खर्च का उपयोग होता है। इस प्रकार संयुक्त व्यंजनों का प्रचलन आज़ भी है। कंप्यूटर में भी ये चिह्न उपलब्ध हैं। इसलिए इनके प्रयोग की ही संभावना है।

5. अंग्रेज़ी 'ऑ' स्वर-चिह्न का प्रयोग—हिंदी में अंग्रेज़ी के पर्याप्त शब्दों का प्रयोग होने लगा है। अंग्रेज़ी की 'ऑ' स्वर ध्वनि का हिंदी में प्रयुक्त अंग्रेज़ी शब्दों में प्रभावी रूप में प्रयोग होने लगा है। स्पष्टता की दृष्टि से इस ध्वनि के लिए 'ऑ' चंद्रांक चिह्न अपना लेना चाहिए। इस चिह्न का प्रयोग होने भी लगा है; यथा—

कॉलेज, बॉल, डॉक्टर आदि।

6. इ की मात्रा 'ि' का प्रयोग—इ की मात्रा की समस्या-समाधान के लिए कभी इसकी पाई के नीचे के भाग को बायें घुमाया गया, तो कभी इसे आधा कर दिया गया, किंतु जन सामान्य ने स्वीकार नहीं किया। इस पर अब भी प्रयास चलते रहते हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मेरे विचार से संस्कृत भाषा के नियम का अनुपालन करना चाहिए। उस नियम के अनुसार यदि इ की मात्रा 'ि' के पूर्व कोई अर्ध व्यंजन उच्चरित होगा, तो उच्चारण वही रहेगा, किंतु वह अर्ध व्यंजन इ की मात्रा के बाद लिखा जाएगाः यथा–सममिलन (उच्चारण)>सम्मिलन (लेखन) ये दोनों रूप अपने उच्चारण-लेखन स्थानों में शुद्ध हैं। इस प्रकार इ की मात्रा में किसी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता नहीं है।

7. अनुस्वार और अनुनासिक चिह्नों के स्वतंत्र प्रयोग–नागरी में अनुस्वार के ' ं ' लिए और अनुनासिक के लिए ' ँ ' चिह्नों के प्रयोग किए जाते हैं। हिंदी के सरलीकरण में कभी-कभी दोनों के लिए ' ं ' चिह्न का प्रयोग करते हैं। इससे लेखन और अभिव्यक्ति में अस्पष्टता आ जाती है; यथा–हंस (हंस)–हंस (हँस)। यहाँ हंस और हँस (हँसना) दोनों अस्पष्ट हो गए।

अनुस्वार और अनुनासिक दोनों के लिए स्वतंत्र चिह्नों का प्रयोग करना चाहिए।

8. 'ळ' व्यंजन वर्ण का प्रयोग–इस ध्वनि का प्रयोग वैदिक, मराठी भाषाओं के साथ हिंदी की कुछ बोलियों में भी होता है; यथा–हरियाणवी में 'बालक' को 'बाळक' बोलते हैं।

इस प्रकार इस बहुल प्रयुक्त ध्वनि को व्यक्त करने के लिए नागरी वर्णमाला के अंतस्थ व्यंजनों में स्थान देकर मानकीकरण किया गया है।

9. शिरोरेखा–नागरी लिपि में प्रयुक्त होनेवाली शिरोरेखा लेखन में व्यवस्था और सौंदर्य का आधार है। लेखन में त्वरा लाने के लिए कभी-कभी शिरोरेखा विहीन लिपि का प्रयोग किया जाता है। ऐसा लेखन अनुपयोगी नहीं है, किंतु नागरी में व्यवस्था और सौंदर्य युक्त रूप प्रदान करने वाली शिरोरेखा का प्रयोग करना चाहिए। व्यवस्था और सौंदर्य विश्लेषण हेतु एक वाक्य प्रस्तुत है–"यह गुलाब का फूल तुम्हारे लिए है।" इस वाक्य का प्रत्येक अंश शिरोरेखा से सुव्यवस्थित है। इसका सौंदर्य और स्पष्ट अभिव्यक्ति सुनिश्चित है। शिरोरेखाविहीन लेखन में ये गुण शिथिल हो जाएंगे।

10. संघर्षी चिह्नों का प्रयोग–कुछ विद्वानों का कहना है कि उर्दू की ख़, ग़, ज़ और फ़ ध्वनियों के लिए इन वर्णों को नागरी में अपना

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लेना चाहिए।

नागरी में ख, ग, ज और फ चिह्न पहले से हैं। यदि इनमें संघर्षी चिह्न 'अ़' इनके साथ लगा दिया जाए, तो ये चिह्न ख़, ग़, ज़ और फ़ बन जाते हैं। कंप्यूटर में भी यही प्रक्रिया अपनाई जाती है।

इसलिए इन्हें नागरी वर्णमाला में नहीं लिया गया है।

11. पूर्ण विराम—वाक्य की पूर्णता पर पूर्ण विराम का प्रयोग किया जाता है। हिंदी में परंपरागत रूप से पूर्ण विराम '।' का प्रयोग होता रहा है। भारत में अंग्रेज़ी के प्रचार-प्रसार के साथ अंग्रेज़ी का Full Stop '.' हिंदी में भी प्रयोग होने लगा। 'आज' समाचार-पत्र में इसका प्रयोग हुआ और कुछ विद्वान भी इसके समर्थक बन गए।

नागरी के विभिन्न विराम चिह्नों के साथ पूर्ण विराम '। ' का ही प्रयोग करना चाहिए क्योंकि वैदिक, संस्कृत, पाली, प्राकृत और अपभ्रंश में भी इसी चिह्न का प्रयोग किया जाता है। इससे परंपरा से जुड़ा रहना उपयोगी है। यह चिह्न वाक्य की पूर्णता को दृश्य रूप में स्पष्ट बोध कराता है।

नागरी लिपि एक वैज्ञानिक लिपि है, वर्तमान वैश्वीकरण की प्रक्रिया में देश की ही नहीं, विदेशी भाषाओं के लिए भी उपयोगी बनाने के लिए इसका मानकीकरण किया गया है। इस मानकीकरण के आधार पर हम स्पष्ट रूप से कह सकते हैं कि नागरी किसी भी अन्य लिपि से कहीं अधिक वैज्ञानिक लिपि है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

6

हिंदी कंप्यूटिंग

6.1 कंप्यूटर : परिचय एवं महत्त्व

1. परिभाषा—कंप्यूटर शब्द का प्रयोग बहुत तेज़ी से कार्य करने के अर्थ में किया जाता है। 'कंप्यूटर' शब्द अंग्रेज़ी के 'कम्प्यूट' शब्द से बना है जिसका अर्थ है—'गणना'। इस शब्द के आधार पर कंप्यूटर को इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं—**"गणना युक्ति (Calculating Device) के आधार पर त्वरित गति से कार्य संपन्न करने वाली इलेक्ट्रानिक मशीन को कंप्यूटर कहते हैं।"**

2. परिचय—वर्तमान समय के बहुचर्चित और बहुउपयोगी इस यंत्र का रोचक परिचय है। सर्वप्रथम सन् 1833 में ब्रिटेन के सर चार्ल्स बैवेज ने एक विशेष इंजन का विकास किया, जिसमें आधुनिक कंप्यूटर के गुण थे। इसलिए सर चार्ल्स बैवेज को कंप्यूटर का जनक माना गया है।

सन् 1890 में हरमन होलिरथ को प्रथम विद्युत यांत्रिक कंप्यूटर बनाने का श्रेय मिला है। द्वितीय विश्वयुद्ध के समय सन् 1939 में अनेक विध्वंसक हथियारों का निर्माण हुआ। इसी क्रम में जीवनोपयोगी यंत्रों का भी निर्माण हुआ। द्वितीय विश्वयुद्ध में सेना की विविध गणनाओं में कंप्यूटर का भरपूर उपयोग किया गया। यहीं से मनुष्य को कंप्यूटर की विशेष शक्ति का आभास हुआ और कंप्यूटर के शोध को गति मिली।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

वर्तमान समय में कंप्यूटर संपूर्ण विश्व के लिए आकर्षण का केंद्र और गतिशीलता का आधार बन गया है। 'कंप्यूटर' शब्द आज हर पढ़े-लिखे व्यक्ति तक पहुँच चुका है। इसका प्रयोग शहर से आगे गाँवों में भी होने लगा है। आज कंप्यूटर प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप में हमारी दिनचर्या को गंभीरता से प्रभावित कर रहा है। अधिकांश लोगों का मत है कि कंप्यूटर सब कुछ कर सकता है, यह कथन उचित नहीं है। हाँ, 'कंप्यूटर' सब कुछ नहीं कर सकता है, किंतु बहुत कुछ कर सकता है।

कंप्यूटर के कार्य को देख कर ऐसा लगता है कि इसमें अपनी बुद्धि होती है, किंतु ऐसा नहीं है। कंप्यूटर मनुष्य के आदेशानुसार कार्य करता है। बिना आदेश के कंप्यूटर कुछ भी नहीं कर सकता है। आदेश कितना भी छोटा या बड़ा हो, कंप्यूटर उसका पालन करता है। कंप्यूटर को दिए गए आदेश गलत होंगे, तो गलत कार्य करेगा या कार्य न होने के संकेत कर देगा और आदेश सही होने पर सही कार्य करेगा।

कंप्यूटर मनुष्य के आदेश पर कार्य करता है, इसलिए इसकी प्रक्रिया भी हमारी तरह है। हम आँख से देखते हैं, कान से सुनते हैं और मस्तिष्क से विचार करते हैं। आवश्यकता पड़ने पर मुख से बोलते हैं या लिखते हैं। ठीक इसी प्रकार कंप्यूटर आदेश का पालन कर विवरण मेमोरी में इकट्ठा करता है और आवश्यक होने पर हमें मॉनीटर पर दृश्य अथवा प्रिंटर से टाइप रूप में प्रदान करता है।

मनुष्य बहुत सारे विवरण याद करने पर कुछ भूल भी सकता है, किंतु कंप्यूटर सब सुरक्षित रखता है। कंप्यूटर से चाहे जितनी बार डाटा प्राप्त करना चाहें, बहुत तीव्रता से और हर बार शुद्ध रूप में प्राप्त होता है, जो मनुष्य के द्वारा सामान्य रूप में संभव नहीं है।

3. महत्त्व—कंप्यूटर के महत्त्व और मानव-जीवन की विशेष उपयोगिता को देखते हुए इस युग को कंप्यूटर युग कहा जाता है। कंप्यूटर का उपयोग बड़ी-बड़ी कंपनियों, बड़े-बड़े कार्यालयों, प्रतिष्ठानों, बैंकों में दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है। कंप्यूटर आम आदमी के जीवन के लिए प्रभावी भूमिका में सामने आ रहा है। रेलवे आरक्षण, बिजली बिल आदि कंप्यूटर से मिलने

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

लगे हैं। शिक्षा और मनोरंजन में कंप्यूटर से आशातीत विकासात्मक परिवर्तन हो चुके हैं।

वर्तमान समय में कंप्यूटर का उपयोग लगभग सभी क्षेत्रों में होने लगा है। कंप्यूटर प्रयोग के कुछ प्रमुख क्षेत्र उल्लेखनीय हैं–

1. **शिक्षा क्षेत्र**–वर्तमान में कंप्यूटर का प्रभाव सर्वाधिक रूप में शिक्षा क्षेत्र पर पड़ा है। लगभग सभी शिक्षा संस्थानों में कंप्यूटर शिक्षा अनिवार्य होती जा रही है। कंप्यूटर की शिक्षा के बाद विद्यार्थियों और शिक्षकों को बड़ी-बड़ी पुस्तकों को रखने की आवश्यकता नहीं रही। अब सी. डी. में हज़ारों पृष्ठों की सामग्री रखना कहीं अधिक सुरक्षित और सरल हो गया है। इंटरनेट ने तो देश-विदेश के ज्ञान-विज्ञान के तथ्यों को घर तक पहुँचा दिया है।

2. **व्यवसाय क्षेत्र**–वर्तमान समय के व्यवसाय में कंप्यूटर का उपयोग तेज़ी से बढ़ रहा है। व्यवसाय का सारा लेखा-जोखा कंप्यूटर के माध्यम से पर्याप्त तेज़ी से अर्थात् सीमित समय में व्यवस्थित रूप से संपन्न कर लिया जाता है। इससे व्यवसाय में अपेक्षित लाभ और उन्नति के अवसर मिल रहे हैं।

3. **वैज्ञानिक कार्य**–ज्ञान-विज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के अनुसंधान को कंप्यूटर से विशेष गति और दिशा मिली है। वैज्ञानिकों को जिस विश्लेषण में कई-कई दिन लग जाते थे, कंप्यूटर के सहयोग से वही कार्य कुछ सैकंडों में संपन्न हो जाता है। एक बार प्राप्त अनुकूल उत्तम परिणाम सदा के लिए उसी रूप में सुरक्षित हो जाता है। इस प्रकार कंप्यूटर वैज्ञानिक अनुसंधान के लिए वरदान सिद्ध हुआ है।

4. **प्रकाशन क्षेत्र**–पुस्तक प्रकाशन में कंप्यूटर की भूमिका विशेष महत्त्वपूर्ण है। पहले पतली-सी पुस्तक छापने में महीनों लग जाते थे, अब कुछ ही दिनों में रंगीन, पूर्ण व्यवस्थित, शुद्ध और आकर्षक पुस्तक छाप सकते हैं।

कंप्यूटर के सहारे प्रकाशन क्षेत्र में क्रांतिकारी परिवर्तन हुआ है। समाचार-पत्रों के तीव्र प्रचार-प्रसार का श्रेय कंप्यूटर को ही मिलता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

5. **मनोरंजन क्षेत्र**–मनुष्य कार्य करने के बाद मनोरंजन चाहता है। कंप्यूटर के माध्यम से चलचित्र जगत, दूरदर्शन और आकाशवाणी पर ज्ञानवर्धक तथ्यों के साथ मनोरंजक संदर्भ सरलता और प्रभावी रूप में प्रस्तुत किए जा रहे हैं। ऐसे कार्यक्रमों के संयोजन, एडिटिंग और प्रस्तुति में कंप्यूटर की सराहनीय भूमिका होती है।

घर के विभिन्न कार्य कंप्यूटरीकृत यंत्रों से संपन्न होने लगे हैं। विभिन्न कारों का नियंत्रण कंप्यूटर से होने लगा है। वह दिन दूर नहीं है जब यांत्रिक मानव (रोबोट) हमारा सेवक या सहयोगी बन कर हमारा हाथ बँटवाएगा।

वर्तमान समय में मनुष्य की गतिशील दिनचर्या में कंप्यूटर की विशेष भूमिका है। मनुष्य को प्रत्येक क्षेत्र में कंप्यूटर से दिशा और गति मिली है।

6.2 कंप्यूटर का संरचनात्मक स्वरूप

कंप्यूटर के बढ़ते उपयोग को देखते हुए इसके स्वरूप में तेज़ी से विकास हो रहा है। डिजिटल कंप्यूटरों में माइक्रो-कंप्यूटर (Micro-Computer) आकार की दृष्टि से छोटे, तकनीकी दृष्टि से श्रेष्ठ और कम मूल्य के साथ प्रभावशाली कार्यक्षमता वाले होते हैं। वर्तमान समय में प्रचलित पी. सी. (Personal Computer) इसी के अंतर्गत आते हैं।

ऐसे कंप्यूटर का निर्माण सन् 1970 में माइक्रो-प्रोसेसर के निर्माण के साथ हुआ है। सर्वप्रथम पी. सी. बना कर विश्व-पटल पर लाने वाली कंपनी आई. बी. एम. (International Business Machine) ने सन् 1981 में यह चमत्कार किया है।

कंप्यूटर के भाग (Parts of Computer)

कंप्यूटर चाहे जिस श्रेणी का हो, अथवा चाहे जिस कंपनी का हो, उसके मुख्य भाग समान ही होते हैं। इस प्रकार कंप्यूटर के सभी भागों को समग्र रूप में पी. सी. नाम दिया गया है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कंप्यूटर—अध्ययन में इसे मुख्यतः दो भागों में विभक्त किया जाता है—

1. हार्डवेयर
2. सॉफ्टवेयर

हार्डवियर—इसमें कंप्यूटर के हिस्से या यंत्र आते हैं; यथा—सी. पी. यू., मॉनीटर, कुंजीपटल और माउस।

सॉफ्टवेयर—कंप्यूटर में प्रयुक्त प्रोग्राम जिसके आधार पर वह कार्य करता हुआ परिणाम देता है, उसे सॉफ्टवेयर कहते हैं।

पी. सी. के हार्डवेयर और सॉफ्टेवयर के समग्र स्वरूप को निम्नलिखित प्रमुख भागों में विभक्त करते हुए उसकी विवेचना कर सकते हैं—

1. सी. पी. यू. (Central Processing Unit)—यह पी. सी. का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग है। यह भाग हमारे आदेश का पालन कर आँकड़ा ग्रहण करता है और आवश्यक होने पर सुरक्षित आँकड़ा हमें देता है।

कंप्यूटर आदेशानुसार कार्य करता है। जो भी आदेश कंप्यूटर को विभिन्न पद्धतियों से दिया जाता है, वे सभी केंद्रीय संसाधन एकक (सेंट्रल प्रोसेसिंग यूनिट) के नियंत्रण कक्ष में पहुँचते हैं। नियंत्रण कक्ष प्राप्त सूचनाओं और आदेश को पहले प्राथमिक स्मृति (Primary Memory) में भेज देता है। यहाँ पहुँच कर सूचनाएँ अस्थायी रूप से जमा हो जाती हैं। जब सूचनाओं को प्राप्त करना होता है, तो ये प्राथमिक स्मृति से नियंत्रण कक्ष में आ जाती हैं। इसके पश्चात सूचनाएँ आउट पुट के लिए निर्गत साधनों की ओर भेज दी जाती हैं।

केंद्रीय संसाधन एकक (C. P. U.) के मध्य होने वाली इस त्वरित प्रक्रिया को इस प्रकार दर्शा सकते हैं—

केंद्रीय संसाधन एकक (C. P. U.) को मुख्यतः तीन भागों में विभक्त कर इसकी विवेचना की जा सकती है—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

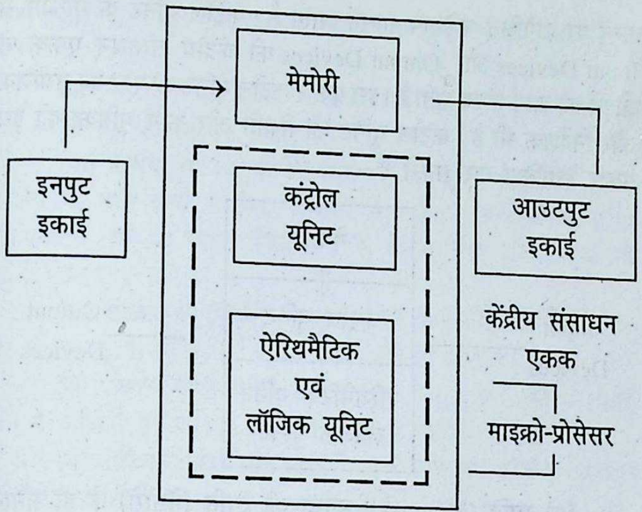

(क) एरिथमैटिक एण्ड लॉजिक यूनिट (Arithmetic and Logic Unit)
(ख) कंट्रोल यूनिट (Control Unit)
(ग) प्राथमिक स्मृति (Primary Memory)

(क) ऐरिथमैटिक एण्ड लॉजिक यूनिट (A. L. U.)—केंद्रीय संसाधन एकक का यह महत्त्वपूर्ण भाग गणित और तर्क का कार्य संपन्न करता है। इस प्रक्रिया में जोड़ने, घटाने, भाग करने और गुणा करने का कार्य संपन्न होता है। तर्क प्रक्रिया से तुलनात्मक अध्ययन का निष्कर्ष सामने आता है। इससे यह स्पष्ट होता है कि दो में कौन बड़ा या छोटा है अथवा कितने आपस में बराबर हैं। गणितीय प्रक्रिया में अंकों अर्थात् 0, 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9 का प्रयोग किया जाता है, तो तार्किक प्रक्रिया में अंकों के साथ शब्दों का प्रयोग संभावित होता है।

(ख) कंट्रोल यूनिट (C. U)—केंद्रीय संसाधन एकक का यह भाग निर्देशक और नियंत्रक का कार्य करता है। कंट्रोल यूनिट के द्वारा ऐरिथमैटिक एण्ड लॉजिक यूनिट और प्राथमिक स्मृति में सामंजस्य स्थापित करके कार्य को गति देने की भूमिका निभाई जाती है। इन दोनों के मिल कर कार्य

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

करने पर अपेक्षित परिणाम सामने आता है। कंट्रोल यूनिट के माध्यम से Input Devices और Output Devices को केंद्रीय संसाधन एकक से जोड़ने का कार्य संभव होता है। इस प्रकार कंट्रोल यूनिट कंप्यूटर का संयोजक और निर्देशक भी है। कंट्रोल यूनिट की स्थिति और कार्य भूमिका को इस प्रकार रेखांकित कर सकते हैं–

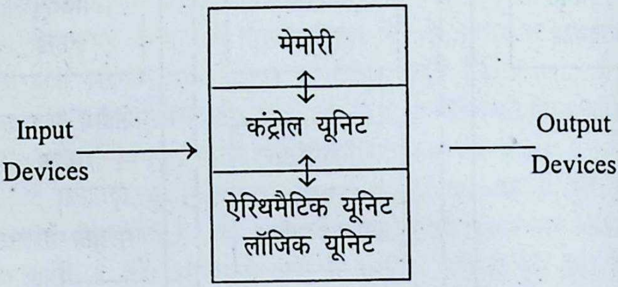

(ग) स्मृति (Memory)–मनुष्य की स्मृति (मेमोरी) के ही समान कंप्यूटर की स्मृति होती है। कंप्यूटर के जिस भाग में आँकड़ा और प्रोग्राम सुरक्षित रहते हैं, उसे कंप्यूटर की स्मृति (मेमोरी) कहते हैं।

प्राथमिक स्मृति अस्थाई होती है। इसमें आँकड़े या प्रोग्राम तब तक रहते हैं, जब तक उसमें विद्युत धारा होती है। विद्युत धारा के बंद होते ही प्राथमिक स्मृति का सारा विवरण लुप्त हो जाता है। प्राथमिक स्मृति का विवरण स्थायी नहीं हो सकता, इसलिए इसे स्थाई बनाने के लिए द्वितीयक स्मृति में सुरक्षित (Save) कर दिया जाता है। इस प्रकार भविष्य में जब भी इन सूचनाओं की आवश्यकता हो, तो उन्हें प्राप्त कर सकते हैं।

2. कुंजी पटल (Key Board)–यह कंप्यूटर का मुख्य इनपुट डिवाइस है। इसकी विभिन्न कुंजियों को हाथ की उँगलियों से दबा कर आँकड़ा टाइप किया जाता है। यह टाइपराइटर के कुंजी-पटल की तरह ही कार्य करता है। इससे जो भी टाइप किया जाता है, वह स्क्रीन पर दिखाई देता है।

पी. सी. बनाने वाली विभिन्न कंपनियाँ अनेक प्रकार के कुंजी पटल का निर्माण करती हैं। दो प्रकार के कुंजी-पटल मुख्य रूप से उपलब्ध हैं।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

एक प्रकार के कुँजी पटल में 101 बटन और दूसरे में 104 बटन होते हैं।

विभिन्न बटनों की भूमिका अलग-अलग होती है। कुछ प्रमुख वर्ग की बटनों का परिचय इस प्रकार है।

(क) **वर्णमाला (अल्फाबेटिकल) कुंजी**–कुंजी-पटल पर लिपि विशेष के सभी वर्णों के लिए कुंजियाँ होती हैं। कुछ कुंजी पटल दो लिपियों के वर्ण या चिह्न अंकित होते हैं; यथा–रोमन और नागरी का कुंजी-पटल।

(ख) **संख्यात्मक (न्यूमेट्रिक) कुंजी**–लिपि विशेष के सभी अंकों–0, 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9, के लिए कुंजियाँ होती हैं।

(ग) **फंक्शन कुँजी**–कुंजी पटल पर F1, F2,.....F12 कुंजियाँ होती हैं। ये कुंजियाँ पूरे आदेश का पालन कर परिणाम देती हैं।

(घ) **लॉजिकल कुंजी**–लॉजिकल चिह्नों के लिए कुछ कुंजियाँ एक क्रम में निर्धारित होती हैं; यथा : —,<, >, ?, &, / आदि।

(ङ) **कर्सर कंट्रोल कुंजी**–कर्सर को नियंत्रित करने के लिए कुछ कुंजियों की व्यवस्था एक स्थान पर होती है। इन पर →, ←,↑↓ बने चिह्न क्रमशः कर्सर को दायें, बायें, ऊपर और नीचे ले जाने का संकेत करते हैं। अर्थात् इनको दबाने से कर्सर उसी दिशा में बढ़ जाता है।

(च) **विशेष कुंजियाँ**–कुंजी पटल में कुछ अन्य प्रमुख कुंजियाँ हैं–इंटर कुंजी, शिफ्ट कुंजी, डेल कुंजी, पेज अप कुंजी, पेज डाउन कुंजी आदि।

3. मॉनीटर (Monitor)–कंप्यूटर के समस्त आँकड़ों और सूचनाओं को मुख्यतः देखने के लिए जिस आधार का उपयोग किया जाता है, उसे मॉनीटर कहते हैं।

मॉनीटर को कंप्यूटर का प्रारंभिक निर्गम आधार (आउटपुट डिवाइस) मान सकते हैं। मॉनीटर के स्वरूप में लगातार परिवर्तन होता रहा है। मॉनीटर को मुख्यतः दो वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

(क) **कलर मॉनीटर**–वर्तमान समय में कलर मॉनीटर के भी कई प्रकार आ गए हैं। इनमें प्रमुख हैं–सामान्य कलर मॉनीटर, ए. जी. ए. कलर मॉनीटर, बी. जी. ए. कलर मॉनीटर, एस. पी. सी. ए. कलर मॉनीटर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

और मल्टी सिंक कलर मॉनीटर।

(ख) **मोनोक्रोम मॉनीटर**–यह एक रंग पर आधारित मॉनीटर होता है। इसमें एक रंग का ही डिस्प्ले देख सकते हैं। एक रंग के मॉनीटरों के भी अनेक रूप बाज़ार में उपलब्ध हैं।

4. माउस (Mouse)–इसका प्रयोग कंप्यूटर में इनपुट डिवाइस के रूप में किया जाता है। कुंजी पटल के माध्यम से जो कार्य नहीं हो पाता, उसे माउस के माध्यम से करते हैं।

इसका आविष्कार सन् 1977 में स्टेनफोर्ड रिसर्च लेबोरेट्री के चर्चित वैज्ञानिक सी. इंडोलवर्ट ने किया था।

माउस मुख्यतः चार प्रकार के मिलते हैं–बस, आप्टिकल माउस, मैकेनिकल माउस, सीरियल माउस।

प्रत्येक पी. सी. में माउस लगाकर उसका क्रियान्वयन करते हैं। इसे रबर या कॉटेन के पैड पर घुमाते हैं। इससे मॉनीटर पर इसका Icon हमारे हाथ के साथ चलता है। Icon को मॉनीटर के किसी आदेश पर ले जाकर माउस के आगे के बायें भाग को दो बार दबाते हैं, तो कार्य शुरू हो जाता है।

इस प्रकार माउस कंप्यूटर का प्रमुख निवेशक अंग है।

कंप्यूटर के माध्यम से परिणाम प्राप्त करने के लिए जब आँकड़ों का उपयोग किया जाता है, तो उसे आँकड़ा संसाधन कहते हैं। इस प्रक्रिया में जोड़ना, घटाना, गुणा करना, भाग देना आदि संभव होता है। इन पद्धतियों को अपना कर हम सूचना या परिणाम प्राप्त करते हैं। पहले यह कार्य कागज़ और कलम के सहयोग से किया जाता था। अब वही कार्य त्वरा के साथ इलेक्ट्रानिक आँकड़ा संसाधन (Electronic Data Processing) के आधार पर किया जाता है।

6.3. आँकड़ा संसाधन (Data Processing)

आँकड़ा संसाधन को अंग्रेज़ी में Data Processing कहते हैं। किसी वस्तु या विषय के संदर्भ में जो जानकारी उपलब्ध होती है, उसे आँकड़ा (Data)

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कहते हैं। यदि एक गाय के विषय में उसके रंग, कद, वज़न, देने वाले दूध की मात्रा आदि का विवरण दिया जाए, तो यह गाय से संबंधित आँकड़ा होगा।

आँकड़े मुख्यतः दो प्रकार के होते हैं—प्रथम वर्णात्मक, जो शब्दों में और संख्यात्मक, जो अंकों 0, 1, 2, 3, 4, 5, 6, 7, 8, 9 से संबंधित होते हैं।

1. आँकड़ा संसाधन प्रविधि और स्वरूप—मनुष्य ने कंप्यूटर विकसित कर उसके माध्यम से अपनी कार्य-शक्ति को विकसित कर लिया। जिस प्रकार हम अपनी आँखों से किसी वस्तु का रंग देखते हैं, कानों से ध्वनि का श्रवण करते हैं, त्वचा से स्पर्श का अनुभव करते हैं, ठीक इसी प्रकार कंप्यूटर में निवेश आधार (इनपुट डिवाइस) पर सूचनाएँ अंदर पहुँच कर उसकी स्मृति की धरोहर बन जाती हैं। जिस प्रकार मनुष्य का मस्तिष्क प्राप्त सूचनाओं का विश्लेषण करता है, ठीक उसी प्रकार कंप्यूटर के केंद्रीय संसाधन एकक में सूचनाओं का विश्लेषण होता है। मनुष्य कान, नाक, आँख, त्वचा आदि के माध्यम से प्राप्त सूचनाओं के विश्लेषण के बाद संबंधित भाव को मुँह, आँख और हाथ आदि से प्रकट करता है। ठीक इसी प्रकार कंप्यूटर आँकड़ा संसाधन के बाद सूचनाओं को मॉनीटर, प्रिंटर और स्पीकर द्वारा प्रकट करता है।

मनुष्य के मस्तिष्क और कंप्यूटर की स्मृति में भिन्नता यह है कि मनुष्य का मस्तिष्क प्राप्त आँकड़ों से आगे कल्पना लोक में जा सकता है, उसे प्रकट भी कर सकता है, किंतु कंप्यूटर प्राप्त आँकड़े तक ही सीमित रहता है। वह आँकड़े से बाहर नहीं जा सकता है।

कंप्यूटर में आँकड़ा का संसाधन जितनी व्यवस्था तथा श्रेष्ठता से किया जाएगा, परिणाम भी उतना ही उत्तमोत्तम प्राप्त होगा।

कंप्यूटर के आँकड़ा संसाधन की एक प्रमुख विशेषता है कि आँकड़े को क्रमबद्ध रूप में अपने मनोनुकूल प्राप्त कर सकते हैं। एक ही आँकड़े का उपयोग अनेक बार और अनेक पद्धति से किया जा सकता है।

कंप्यूटर के आँकड़ा संसाधन की एक अन्य उल्लेखनीय विशेषता है कि इसकी प्रक्रिया मनुष्य की गति से कहीं अधिक तीव्र होती है। इसके

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection.

साथ ही जिस गणना में हमें घण्टों-घण्टों समय लग जाता है, उसे कंप्यूटर के माध्यम से सेकंडों में हल किया जा सकता है। हम कंप्यूटर में आए हुए आँकड़े का उपयोग जितनी बार चाहें कर सकते हैं। टाइपराइटर पर टाइप किए गए एक पत्र को दस आदमियों के पास भेजना हो, तो दस बार टाइप करना होगा या कार्बन का उपयोग करना होगा। कंप्यूटर से उस पत्र के दस प्रिंट निकालना अत्यंत सरल कार्य है।

इस प्रकार स्पष्ट रूप से कहा जा सकता है कि कंप्यूटर माउस और कुँजी पटल के सहारे आँकड़ा प्रस्तुत करते हैं। मॉनीटर पर उसकी शुद्धता परखते हुए प्रारंभिक स्मृति से स्थाई स्मृति में सुरक्षित कर देते हैं। संसाधित आँकड़ा किसी भी समय स्क्रीन पर देखा जा सकता है अथवा प्रिंटर के माध्यम से प्रिंट रूप में प्राप्त किया जा सकता है।

2. भेद–आँकड़ा संसाधन को मुख्यतः निम्नलिखित भागों में विभक्त किया जा सकता है–

1. हार्डवेयर विकल्प (Hardware Option)—आँकड़ा संसाधन के हार्डवेयर विकल्प के विकास में आई. आई. टी., कानपुर की भूमिका विशेष रूप से उल्लेखनीय रही है। सॉफ्टवेयर की इस प्रणाली को जिस्ट प्रौद्योगिकी (Graphics and Intelligence based script Technology) नाम दिया गया है। आँकड़ा संसाधन की इसी प्रणाली को अपनाकर भारत सरकार के 'सी-डेक' सोसाइटी ने 'परम' नामक सुपर कंप्यूटर का विकास किया है। यह सोसाइटी 'सी-डेक' (Centre for Development of Advanced Computering) महाराष्ट्र प्रदेश के पुणे में स्थित है। जिस्ट प्रौद्योगिकी में पर्सनल कंप्यूटर के 'मदर बोर्ड' पर एक 'प्लग इन कार्ड' लगाया जाता है। इसे जिस्ट कार्ड कहते हैं। इस जिस्ट कार्ड द्वारा आई. बी. एम. पर्सनल कंप्यूटरों में द्विभाषिक अथवा बहुभाषिक आँकड़ा संसाधन संभव हुआ है। यूनिक्स और जैनिक्स परिचालन पद्धतियों के लिए जिस्ट कार्ड के स्थान पर 'जिस्ट टर्मिनल' की अपेक्षा होती है। जिस्ट प्रौद्योगिकी के माध्यम से हिंदी और विभिन्न भाषाओं का प्रयोग संभव हुआ है।

2. सॉफ्टवेयर विकल्प (Software Option)—आँकड़ा संसाधन की यह प्रविधि विशेष महत्त्वपूर्ण है। इसमें सॉफ्टवेयर विकल्प फ्लॉपी के रूप

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

में प्राप्त किया जाता है। इसके लिए अपने कंप्यूटर में किसी प्रकार के परिवर्तन की आवश्यकता नहीं होती है। केंद्रीय संसाधन एकक की स्मृति से आँकड़े को फ्लॉपी डिस्क के रूप में उपलब्ध कर लेते हैं। इस प्रक्रिया से लंबे समय तक के लिए आँकड़े को सुरक्षित रख सकते हैं और जब भी आवश्यक हो, उपयोग कर सकते हैं।

फ्लॉपी डिस्क के रूप में उपलब्ध पैकेज को दो रूपों में विभक्त कर सकते हैं–

(अ) **समर्पित सॉफ्टवेयर प्रोग्राम (Dedicated Software Programmes)**—यह हिंदी में आँकड़ा संसाधन का एक महत्त्वपूर्ण सॉफ्टवेयर है–बेस (द्विभाषी डाटाबेस प्रबंधन प्रणाली)। इस सॉफ्टवेयर का निर्माण दिल्ली की मैं. सॉफ्टेक प्राइवेट लिमिटेड द्वारा किया गया है। यह सॉफ्टवेयर 'डी-बेस' III प्लस का द्विभाषी संस्करण है। हिंदी में काम करने के लिए एक उपयोगी पैकेज है। इसमें संशोधन की प्रक्रिया चल रही है।

(आ) **सामान्य उद्देशीय सॉफ्टवेयर परिवेश (General Purpose Software Environment)**—आँकड़ा संसाधन का यह ऐसा परिवेश है जिसमें रोमन के अनेक सॉफ्टवेयर पैकेज उपलब्ध हैं; यथा–डी-बेस, लोटस, क्लिपर और सॉफ्टबेस आदि। इन पैकेजों पर हिंदी में भी काम किया जा सकता है। इस परिवेश के विभिन्न प्रोग्रामिंग पर भी हिंदी में कार्य करना संभव है। नई दिल्ली के आर. के. कंप्यूटर रिसर्च फाउंडेशन द्वारा निर्मित 'सुलिपि' नामक सॉफ्टवेयर जिस्ट के ही समकक्ष सामान्य उद्देशीय सॉफ्टवेयर है। इसके आधार पर एम. एस. डॉस पर आधारित पर्सनल कंप्यूटरों पर सभी कार्य हिंदी और अंग्रेज़ी में साथ-साथ किए जा सकते हैं।

जिस्ट और सुलिपि के अंतर्गत विभिन्न भारतीय भाषाओं के लिप्यन्तरण की उत्तम सुविधा है। जिस्ट और सुलिपि में मुख्य अंतर यह है कि जिस्ट के माध्यम से एम. एस. डॉस और यूनिक्स जेनिक्स परिवेश में हिंदी कार्य करना संभव होता है, तो सुलिपि में एल. ए. एन. (Local Area Network) परिवेश में हिंदी कार्य करना संभव है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

6.4. वर्तनी संशोधन

भाषा-शिक्षण में कंप्यूटर विशेष शिक्षक बन गया है। भाषिक अनुप्रयोग में कंप्यूटर कुशल निर्देशक की भूमिका में सामने आता है। कंप्यूटर के आगमन से लेखन और प्रकाशन में विशेष गति आ गई है। जिस प्रकार लेखन में विभिन्न कारणों से गलतियाँ हो जाती हैं, उसी प्रकार कंप्यूटर से टाइप करने पर गलतियाँ संभावित होती है। ये गलतियाँ कभी भाषाई ज्ञान की अल्पज्ञता के कारण होती हैं, तो कभी कुंजी पटल की प्रतिकूल कुंजी पर उँगली पड़ने से होती है।

वर्तनी : परिभाषा

वर्तनी का संबंध शब्द के शुद्ध लेखन, टाइप या छपाई से होता है। वर्तनी को वैज्ञानिक रूप में इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं–**"शब्द के विभिन्न वर्णों और मात्राओं के शुद्ध क्रम में प्रयोग की व्यवस्था को वर्तनी कहते है।"**

इस परिभाषा के अनुसार वर्तनी के शुद्ध रूप के लिए निम्नलिखित दो तथ्यों पर ध्यान देना अनिवार्य होता है–

1. शब्द के लेखन में किन-किन वर्णों और मात्राओं का प्रयोग करना है?
2. शब्द के लेखन में विभिन्न वर्णों और मात्राओं को किस अनुक्रम में प्रयोग करना है?

सामान्य लेखन में शब्द की अशुद्धि स्वयं चिंतन कर, दूसरों से विमर्श कर, विद्वान से पूछकर अथवा शब्दकोश को देखकर ठीक कर ली जाती है। कंप्यूटर में वर्तनी शोधन की वैज्ञानिक और आकर्षक व्यवस्था है। कंप्यूटर में सर्वप्रथम अंग्रेज़ी भाषा का उपयोग किया गया। इसलिए वर्तनी-संशोधन की प्रक्रिया अंग्रेज़ी भाषा से शुरू हुई। वर्तमान समय में हिंदी वर्तनी संशोधन के प्रोग्राम उपलब्ध हैं। जून 2005 में भारत सरकार के प्रतिष्ठान सी-डेक नोएडा के द्वारा हिंदी के कई प्रोग्रामों के साथ वर्तनी के शोधन के प्रोग्राम का लोकार्पण श्रीमती सोनिया गाँधी ने किया। हिंदी प्रोग्राम के प्रचार के लिए इन प्रोग्रामों की सी. डी. का वितरण निवेदन पर निःशुल्क किया जाता है।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

आँकड़ा संसाधन के समय विभिन्न कुंजियों के माध्यम से वर्ण और मात्राओं के सहारे शब्द और वाक्य रचना करते हैं। कंप्यूटर की स्मृति में सुरक्षित शब्दकोश से शब्द-रचना के साथ उसके शुद्ध होने का परीक्षण चलता रहता है। वर्तनी की दृष्टि से यदि शब्द अशुद्ध बनता है, तो उसके नीचे लहरदार लाल रेखा उभर आती है। यह लाल रेखा संकेत करती है कि उक्त शब्द की वर्तनी अशुद्ध है। यदि एक वाक्य टाइप करना हो–"उसका गीत बहुत सुंदर था।" इसे टाइप किया जा रहा था–"उसका *टीत...*" 'टीत' टाइप होते ही इसके नीचे लहरदार लाल लाइन *'टीत'* खिंच जाएगी। जब तक इसे शुद्ध नहीं करेंगे, यह लाइन बनी रहेगी।

वर्तनी संशोधन-प्रक्रिया

कंप्यूटर की स्मृति (मेमोरी) में एक शब्दकोश सुरक्षित कर दिया जाता है। इस कोश के ही आधार पर कंप्यूटर शब्द की शुद्धता का संकेत त्वरित गति से देता है।

1. सामान्य पद्धति–जब कंप्यूटर में वर्तनी-संशोधन का सॉफ्टवेयर नहीं होता है, तो सामान्य पद्धति से टाइपकर्ता अपने विवेक या अन्य के निर्देश से संशोधन करता है। यदि 'उज्ज्वल' शब्द के स्थान पर 'उज्जवल' टाइप कर दिया जाए, तो हम पांडुलिपि को देखकर, पाठक के निर्देश या संकेत पर इसे शुद्ध करते हैं। इसके लिए कर्सर को 'ज' के बाद लाते हैं और बैक स्पेस (Back Space) कुंजी को दबा देते हैं। 'ज' के गायब होने पर 'ज्' की रचना बटन दबाकर कर लेते हैं। इस प्रकार 'उज्ज्वल' शुद्ध शब्द बन जाता है। इसी विलोपन और पुनः लेखन से वर्तनी शुद्ध हो जाती है।

2. टूल पद्धति–जब कंप्यूटर की स्मृति में शब्दकोश सुरक्षित होता है, तो शब्द के गलत टाइप होते ही उसके नीचे लहरदार लाइन उभर आती है। ऐसे में वर्तनी संशोधन के लिए कर्सर को टूल्स (Tools) चिह्नित स्थान पर ले जाकर क्लिक करते हैं। इससे तुरंत ही कंप्यूटर की स्क्रीन पर 'वर्तनी और व्याकरण' का संकेत आ जाएगा। इस पर कर्सर ले जाकर क्लिक करते ही तीन-चार शब्दों के विकल्प सामने आ जाते हैं। अब चिंतन करते हुए शुद्ध विकल्प का मानसिक चयन करते हैं और उस चयनित विकल्प

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पर क्लिक करते हैं। क्लिक करते ही स्क्रीन से सारे विकल्प गायब हो जाते हैं और शब्द का चुना हुआ रूप वाक्य में आ जाता है। अर्थात् अशुद्ध शब्द शुद्ध हो जाता है।

यदि एक वाक्य "वे तो अपाने हैं।" अशुद्ध हो गया है, तो 'अपाने' के नीचे लहरदार रेखा आएगी। अब वर्तनी की संशोधन प्रक्रिया अपनाएँ, तो स्क्रीन पर निम्नलिखित विकल्प आ सकते हैं।

अपना
अपनी
अपने
अपनों

जब अपने भाषाई ज्ञान और विवेक से तीसरे विकल्प 'अपने' पर क्लिक करेंगे, तो तुरंत ही वाक्य के 'अपाने' के स्थान पर 'अपने' स्थानापन्न होने से वाक्य शुद्ध हो जाएगा।

इसी प्रकार 'मेरी कामाना है कि विनय सतत सफल हो' वाक्य टाइप होने पर 'कामाना' के अशुद्ध होने का संकेत आ जाएगा। वर्तनी संशोधन की प्रक्रिया पर ये विकल्प सामने आए हैं—

कमान
कामना
कमाना
कामन

अपने निर्णयानुसार जब द्वितीय विकल्प 'कामना' पर क्लिक किया जाएगा, तो वाक्य का शब्द तुरंत शुद्ध हो जाएगा।

3. त्वरित पद्धति—वर्तनी संशोधन की दूसरी सरल पद्धति यह है कि जब किसी शब्द के अशुद्ध होने का संकेत लाल लहरदार रेखा से किया जाए, तो कर्सर को उस शब्द पर लाकर क्लिक करना चाहिए। क्लिक करते ही पूर्व पद्धति के ही समान तीन-चार विकल्प कंप्यूटर की स्क्रीन

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

पर उभर आएंगे। पूर्व पद्धति के ही अनुसार अपने विवेक से शुद्ध शब्द का चयन कर उस पर क्लिक करते ही शब्द शुद्ध हो जाएगा और अशुद्धि बतानेवाली रेखा गायब हो जाएगी। यदि शब्द बदलने पर भी रेखा बनी रहे, तो समझ लेना चाहिए कि विकल्पों में से शुद्ध शब्द का चयन नहीं हो पाया है। उस शब्द पर पुनः क्लिक करें और अन्य विकल्प पर क्लिक करें। अशुद्धि बतानेवाली रेखा के गायब होने के बाद शब्द के शुद्ध होने की संपुष्टि होती है।

कंप्यूटर की कार्य-प्रणाली त्वरित गति और उत्तमोत्तम परिणाम देनेवाली होती है। कई बार जब टाइप करते हुए वर्तनी की अति लघु अशुद्धि होती है, तो वह अशुद्धि स्क्रीन पर पल भर को रहती है और कंप्यूटर के आधार पर अगले पल स्वतः ही शुद्ध रूप में परिवर्तित हो जाती है।

इस प्रकार वर्तनी संशोधन में कंप्यूटर का विशेष योगदान है। सीमित समय और सीमित परिश्रम से भाषा का शुद्ध रूप मिल जाता है। यह उपलब्धि प्रयोक्ता के विवेक-अभ्यास और कंप्यूटर की विकसित स्मृति की देन है। निश्चय ही कंप्यूटर की त्वरित वर्तनी संशोधन प्रक्रिया प्रकाशन के लिए वरदान सिद्ध हुई है।

6.5 इंटरनेट का ऐतिहासिक परिचय

वर्तमान वैज्ञानिक युग को कंप्यूटर युग की संज्ञा दी गई है। यह नामकरण कंप्यूटर के महत्त्व और उसके अनुप्रेरक प्रभाव का प्रतीक है। कंप्यूटर का प्रभाव दिन-प्रतिदिन त्वरित गति से बढ़ता जा रहा है। कंप्यूटर के माध्यम से सूचना तकनीक का विस्फोट हुआ और विश्व क्षितिज के विभिन्न देश एक-दूसरे से जुड़ गए हैं। इस प्रक्रिया में सबल भूमिका (इंटरनेट) की रही है। सच तो यह है कि इंटरनेट ने विश्व के समस्त देशों को एक दूसरे से निकट लाकर **विश्वगाँव (Global village)** का स्वरूप प्रदान किया है। विश्व में फैले होने के आधार पर इसे विश्वजाल भी कहा जाता है। इसे www अर्थात World Wide Web भी कहते हैं।

1. परिभाषा—विभिन्न विद्वानों ने इंटरनेट के उपयोग और उसकी प्रयोग-पद्धति को देखते हुए इसे इस प्रकार परिभाषित किया है—

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

- कंप्यूटर का वह समूह जो फाइबर ऑप्टिक्स और दूरभाष से जुड़ कर नेटवर्क तैयार कर उपयोग में आता है, वह इंटरनेट है।
- कंप्यूटर का वह नेटवर्क जो विश्व भर का संदेश या समाचार उपलब्ध कराता है, उसे इंटरनेट कहते हैं।
- टेलीफोन की लाइनों के माध्यम से दूर-दूर के स्थानों और देशों के कंप्यूटरों को जोड़कर बनाया गया नेटवर्क इंटरनेट है।
- तीव्रतम गति से विश्व भर का संदेश या समाचार प्रस्तुत करने वाला आधुनिक आधार इंटरनेट है।
- मानव-उपयोगी विश्व के समस्त ज्ञान-विज्ञान के तथ्यों को त्वरित गति से उपलब्ध कराने वाला महत्त्वपूर्ण आधार इंटरनेट है।

इंटरनेट को स्पष्ट रूप में इस प्रकार परिभाषित कर सकते हैं–

"इंटरनेट वह कंप्यूटरीकृत वैज्ञानिक उपलब्धि है, जो टेलीफोन के माध्यम से विश्वस्तर के कंप्यूटरों से जुड़ कर वैश्विक धरातल के ज्ञान-विज्ञान के समस्त तथ्यों और समाचार को त्वरित गति से उपलब्ध कराता है।"

2. इंटरनेट : विकासात्मक इतिहास–इंटरनेट का इतिहास अधिक पुराना नहीं है। इसकी परिकल्पना लगभग चार दशक पूर्व हुई है। यहीं से इंटरनेट का श्रीगणेश मान सकते हैं। जब विश्व की दो महाशक्तियों रूस और अमेरिका के मध्य शीत युद्ध चल रहा था, तो दोनों देशों ने परमाणु हथियारों का आविष्कार कर लिया। ऐसे ही समय अमेरिका के रैंड कार्पोरेशन ने एक ऐसे कंप्यूटर नेटवर्क की खोज की, जो परमाणु आक्रमण के समय भी समाचार आदान-प्रदान का कार्य कर सके।

प्रारंभ में एक कंप्यूटर एक स्वतंत्र और सीमित इकाई के रूप में प्रयुक्त होता था। जो कंप्यूटर सामने होता था उस पर कार्य करते थे और उसका ही उपयोग संभव था। उस समय एक ही कक्ष में या निकट रखे कंप्यूटर के कार्य का उपयोग संभव न था। इस पर गंभीरता से विचार कर एक स्थान पर या कक्ष में रखे विभिन्न कंप्यूटरों को जोड़कर लोकल नेटवर्क तैयार किया गया। यह नेटवर्क की प्रारंभिक सफलता थी। नेटवर्क से जुड़े विभिन्न कंप्यूटरों पर उपलब्ध विवरण अथवा कार्य को किसी

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भी कंप्यूटर पर देखना और उपयोग कर पाना सम्भव हो गया। कई कंप्यूटरों के आँकड़ों को एक स्थान पर उपलब्ध करने का अवसर मिल गया। इस दिशा में सतत प्रगति हुई, दूरस्थ कंप्यूटर को भी नेटवर्क से जोड़कर कार्य शुरू हुआ। धीरे-धीरे इस दिशा में आशातीत सफलता मिली और विश्व के विभिन्न देशों के कंप्यूटरों को विशाल नेटवर्क से जोड़ दिया गया।

3. इंटरनेट का कालक्रमानुसार विकास

प्रथम चरण–बीसवीं शताब्दी के सातवें दशक के प्रारंभ में नेटवर्क की कल्पना की गई। इसके पश्चात् कुछ कंप्यूटरों को जोड़ कर स्थानीय नेटवर्क बनाया गया।

1962–पाल बैरन, रैंड कारपोरेशन ने पैकेट स्विच तकनीक पर आधारित नेटवर्क की परिकल्पना की।

1967–अमेरिका के सैन्य संगठन एडवांस्ड रिसर्च प्रॉजेक्ट एजेन्सी (ARPA) ने ऐसे नेटवर्क निर्माण पर शोध-कार्य शुरू किया।

1969–एडवांस्ड रिसर्च प्रॉजेक्ट एजेंसी (ARPA) ने स्वनिर्मित नेटवर्क से अमेरिका के स्टेनफोर्ड शोध संस्थान और तीन विश्वविद्यालयों के चार कंप्यूटरों को जोड़ कर नेटवर्क का कार्य शुरू किया।

द्वितीय चरण–ARPANET की सफलता के बाद नेटवर्क में जुड़ने वाले कंप्यूटरों की संख्या बढ़ाई गई। अमेरिका से बाहर नेटवर्क का विस्तार किया गया। ई-मेल भेजने का क्रम शुरू हुआ।

1971–अमेरिका के विश्वविद्यालयों के 23 कंप्यूटरों को ARPANET से जोड़ा गया।

1973–अमेरिका के ARPANET को लंदन स्थित यूनिवर्सिटी कॉलेज और नार्वे के रॉयल राडार संस्थान से जोड़ा गया।

1975–स्टोर एण्ड फारवर्ड (Store & Forward) स्वरूप का नेटवर्क विकसित किया गया। इसका उपयोग सर्वप्रथम ब्रिटेन की महारानी एलिज़ाबेथ ने ई-मेल भेजने में किया।

1977–शोध करते हुए ई-मेल सुविधा का विस्तार वैज्ञानिक शोध-कार्यों

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

के लिए किया गया।

1979–ड्यूक विश्वविद्यालय के टॉम ट्रसकाट और जिम एलिस एवं नार्थ केलिफोर्निया विश्वविद्यालय के स्टीव वैलोविन ने USENET न्यूज़ ग्रुप की रचना की।

तृतीय चरण–बीसवीं शताब्दी के नौवें दशक में ई-मेल का उपयोग तेज़ी से बढ़ा और इसी अवधि में ARPANET को इंटरनेट नाम दिया गया। इसका उपयोग व्यावसायिक संदर्भ में शुरू किया गया।

1982–ARPANET के लिए पहली बार 'इंटरनेट' शब्द का प्रयोग किया गया।

1984–डोमेन नेम सर्वर (Dumain Name Server) पद्धति का निर्माण किया गया। JUNET (Japan Unix Network) बनाया गया। इंटरनेट को साइबर स्पेस (Cyber Space) नाम दिया गया।

1987–इस समय तक इंटरनेट HOST कंप्यूटरों की संख्या 10,000 से अधिक हो गई। इसका उपयोग व्यावसायिक संदर्भ में गतिशील हुआ।

1989–इन्टरनेट से जुड़े कंप्यूटरों की संख्या 1,00,000 से ऊपर हो गई।

1990–ARPANET को समाप्त कर दिया गया। अब नेटवर्क ऑफ नेटवर्क्स के रूप में इंटरनेट शेष रहा। इंटरनेट के H0ST कंप्यूटरों की संख्या तेज़ी से बढ़ी और इसकी संख्या 3,00,000 से ऊपर पहुँच गई।

चतुर्थ चरण–इस अवधि में इंटरनेट का उपयोग व्यावसायिक संदर्भ में तेज़ी से बढ़ा।

1992–इंटरनेट पर श्रव्य और दृश्य दोनों रूप सम्भव हुए। टिम औंर बर्नस ने वर्ल्डवाईड वेब (www) का विकास किया। इंटरनेट पर HOST कंप्यूटरों की संख्या 10,00,000 तक पहुँच गई।

1994–इंटरनेट पर विज्ञापन देने की प्रक्रिया शुरू हुई।

1996–इंटरनेट का विस्तार बहुत तेज़ी से हुआ। 150 से अधिक देशों के कंप्यूटर इंटरनेट से जुड़ गए।

1998–भारत में इंटरनेट विस्तार की नीति 'नेशनल इंफारमेटिक्स' पॉलिसी बनाई गई।

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

2000—इंटरनेट का पर्याप्त विस्तार हुआ।

2004—विश्व के समस्त ज्ञान-विज्ञान के तथ्यों का आदान-प्रदान सरल और सुलभ हो गया।

इस प्रकार चार दशक में ही टेलीफोन के माध्यम से एक दूसरे से जुड़ते कंप्यूटरों से इंटरनेट बन गया। विश्व के कोने-कोने के कंप्यूटर जुड़ कर विश्वगाँव का स्वरूप बना चुके हैं। इसीलिए इसे www अर्थात् World Wide Web कहा जाता है।

6.6 इंटरनेट : कार्य-प्रणाली एवं सुविधाएँ

1. इंटरनेट : कार्य-प्रणाली—इंटरनेट में विभिन्न कंप्यूटरों का टेलीफोन के तारों या उपग्रह से योग होता है। इसकी कोई केंद्रीय नियंत्रक समिति नहीं है। इंटरनेट किसी व्यक्ति, संस्था या सरकार की संपत्ति नहीं है। प्रत्येक व्यक्ति या संस्था जो कंप्यूटर नेटवर्क से जुड़ा है, वह उस भाग का मालिक होता है। प्रत्येक देश में कुछ कंपनियों या संस्थानों को सर्वर के लिए लाइसेंस दिए जाते हैं, वे उस सर्वर के मालिक होते हैं, इंटरनेट के नहीं। ये अपने सर्वर से दूसरे तक सूचना भेजती हैं। इंटरनेट की सामग्री ऐसे किसी संस्थान या कंपनी के सर्वर कहे जाने वाले कंयूटरों से उपलब्ध की जाती है। ये सभी सर्वर आपस में टेलीफोन के तारों से अथवा उपग्रह से जुड़ कर डाटा अर्थात समाचार-संदेश का आदान-प्रदान करते हैं।

इंटरनेट की कार्य प्रणाली को इण्टरकॉम की कार्य-प्रणाली से समझना सरल है। इंटरकॉम के माध्यम से एक संस्थान में दो या तीन अंकों के डायल माध्यम से आपस में संवाद होता है। इसमें टेलीफोन एक्सचेंज से जुड़ा हो, तो कहीं के टेलीफोन से संवाद संभव होता है। ऐसे में जैसे ही नंबर डायल किया जाता है, तो संवाद संबंधित निकट के टेलीफोन एक्सचेंज पहुँच जाता है। और वहाँ से डायल किए गए नंबर के आधार पर निश्चित कोड वाले (वांछित) टेलीफोन पर पहुँच जाता है। इस प्रकार संवाद संभव हो जाता है। इंटरनेट प्रयोग की स्थिति और प्रक्रिया इसी प्रकार है। जब हम इंटरनेट से कहीं कुछ संदेश भेजना चाहते हैं, तो संदेश को अपने कंप्यूटर के माध्यम से निकट के (अपनाए गए) सर्वर तक पहुँचाते हैं। उक्त सर्वर

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

के राउटर (Router) के माध्यम से इंटरनेट के पते पर उसके निकट के सर्वर तक संदेश पहुँचता है। यह क्रम तब तक चलता है जब तक संदेश वांछित कंप्यूटर तक पहुँच नहीं जाता है।

इस प्रक्रिया के विषय में यह उल्लेखनीय है कि संदेश या समाचार बाइट के समूह (पैकेटों) में होते हैं। इसका आशय है कि संदेश या समाचार बाइटों (पैकटों) में विभक्त हो कर सर्वर से सर्वर होते हुए वांछित कंप्यूटर तक पहुँचता है। यहाँ यह भी ध्यातव्य है कि संदेश के सभी बाइट (पैकेट) एक ही मार्ग से पहुँचें, यह आवश्यक नहीं है। उसे जो भी मार्ग खाली मिलता है, उसी मार्ग से चल कर गंतव्य तक बाइट (पैकेट) पहुँचाते हैं। अंत में सारा समाचार एकत्र हो जाता है।

2. इंटरनेट : सुविधाएँ

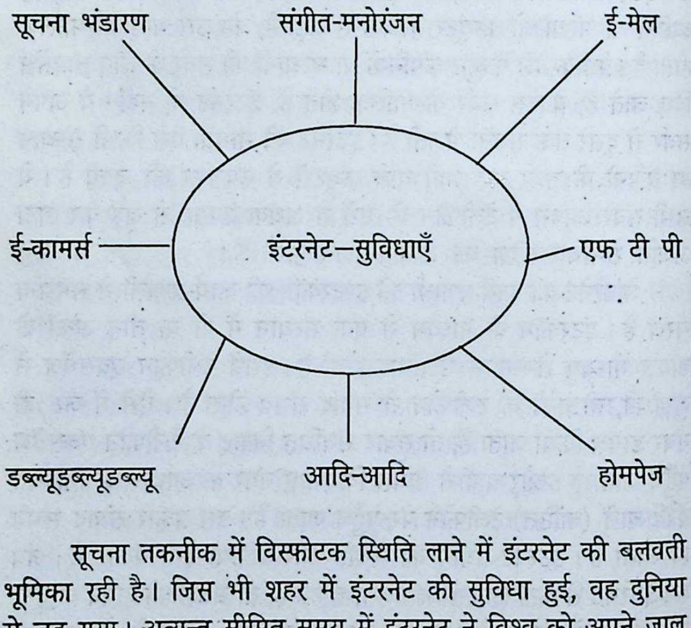

सूचना तकनीक में विस्फोटक स्थिति लाने में इंटरनेट की बलवती भूमिका रही है। जिस भी शहर में इंटरनेट की सुविधा हुई, वह दुनिया से जुड़ गया। अत्यन्त सीमित समय में इंटरनेट ने विश्व को अपने जाल

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

से जोड़ लिया। इसके द्वारा विश्व के किसी भी कोने से संदेश, फोटो, चित्र आदि उपलब्ध कर लेते हैं। जिसके पास इंटरनेट सुविधा है, वह बिना किसी बाधा के जाति, धर्म, समाज और राष्ट्र की सीमा से ऊपर उठकर अपना मत रख सकता है। विश्व की अनेक कंप्यूटर कंपनियों ने इसके विकास में अनुप्रेरक योगदान दिया है। इंटरनेट पर उपलब्ध सुविधाओं को निम्नलिखित वर्गों में विभक्त कर सकते हैं–

1. ई-मेल–यह इलेक्ट्रानिक मेल का संक्षिप्त और प्रचलित रूप है। इसके माध्यम से देश-विदेश के ज्ञान-विज्ञान संबंधी समाचार मिल जाते हैं। हम इसके माध्यम से अपने समाचार, विवरण और चित्रादि कहीं भी भेज सकते हैं।

2. डब्ल्यू-डब्ल्यू-डब्ल्यू (www)—इसका पूरा नाम वर्ल्ड वाइड वेब (world wide web) अर्थात् विश्वव्यापी जाल है। यह एक विशेष डाटा बेस है, जो संसार के कोने-कोने में फैला हुआ है। इसी के आधार पर कोई भी समाचार प्राप्त कर सकता है। प्रयोक्ता विभिन्न शीर्षकों के आधार पर सूचनाओं को व्यवस्थित करता है और प्राप्त भी करता है। इससे पठनीय सामग्री के साथ विविध विवरण चित्र, फोटो, गीत, रेखाचित्र आदि उपलब्ध किए जा सकते हैं।

विश्वव्यापी जाल में कई बार सूचना प्राप्त करने में पर्याप्त समय लगता है। ऐसे में इंटरनेट एक्सप्लोरर (Internet Explorer) या ब्राउजर (Browser) के उपयोग से कार्य सफल हो जाता है। यह महत्त्वपूर्ण उपलब्धि है।

3. होमपेज–इंटरनेट का उपयोग कोई भी व्यक्ति, संस्था, कंपनी होमपेज के रूप में कर सकती है। इसमें व्यक्ति विशेष का विवरण या कंपनी के विवरण, उत्पादों, सेवाओं आदि का विवरण होता है। विवरण में रेखाचित्र, ग्राफ, फोटो आदि सब कुछ रखे जा सकते हैं। वर्तमान समय के व्यावसायिक क्षेत्र में होमपेज का विशेष महत्त्व है।

4. ई-कामर्स–यह इलेक्ट्रानिक कामर्स का संक्षिप्त रूप है। दूर देश में अथवा विदेश में स्थित व्यक्ति या कंपनी से संपर्क कर लेन-देन या खरीद-बिक्री करने को इलेक्ट्रानिक कामर्स कहते हैं। व्यावसायिक क्षेत्र में ई-कामर्स का विशेष महत्त्व है, क्योंकि इसके माध्यम से कम समय और

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

कम खर्च में व्यावसायिक कार्य संपन्न किया जाता है।

5. सूचना भंडारण–कंप्यूटर में ज्ञान-विज्ञान की अनेक जानकारियाँ इकट्ठी की जाती हैं। इंटरनेट से जुड़े हुए दुनिया के विविध कंप्यूटरों की जानकारियां आसानी से उपलब्ध की जा सकती हैं। आज इंटरनेट पर विश्व के अधिकांश विश्वविद्यालयों, प्रतिष्ठानों के कार्य के समस्त विवरण उपलब्ध हैं। पत्र-पत्रिकाएँ इंटरनेट पर उपलब्ध हैं।

इंटरनेट पर भारतीय भाषाओं के समाचार पत्र www.indian languages.com लॉग आन करने पर उपलब्ध हो जाते हैं। विश्व के विभिन्न पुस्तकालय इंटरनेट पर उपलब्ध होने से हम घर बैठे उन पुस्तकालयों की पुस्तकों का उपयोग कर सकते हैं। इंटरनेट पर विभिन्न भाषाओं के शब्दकोश उपलब्ध होने से उनका उपयोग सरल हो गया है। व्यावसायिक, वैज्ञानिक, तकनीकी और न्यायालयीय आदि सूचनाएँ सुविधानुसार प्राप्त हो सकती हैं। इंटरनेट से व्यापार-क्षेत्र को नई-नई दिशाएँ मिल गई हैं। व्यापार-पद्धति भी पूरी तरह बदल गई है। इसके माध्यम से दुनिया के लाखों लोगों से संपर्क सरल हो गया है। इसलिए दुनिया भर के ग्राहकों को जोड़ने के लिए इंटरनेट प्रयोग की होड़ लगी है। इस प्रकार इंटरनेट पर विश्व भर की विविध सूचनाओं का भंडार उपलब्ध होता है। सूचनाओं के समुद्र से मनचाही सूचनाओं को खोजना भी कभी-कभी कठिन हो जाता है। इससे इंटरनेट के विशाल भंडार का स्पष्ट बोध होता है।

6. एफ टी पी–इसका पूरा नाम फाइल ट्रांसफर प्रोटोकाल है। यह इंटरनेट की वह सुविधा है, जिसके माध्यम से दूर के किसी व्यक्ति के पास उपलब्ध जानकारी जो इंटरनेट पर है–अपने कंप्यूटर पर स्थानांतरित या नकल की जा सकती है। इस माध्यम से फाइल को ई-मेल के साथ जोड़ कर कहीं भी भेज सकते हैं। इंटरनेट से जुड़ी कंप्यूटर प्रणालियों की अनेक फाइलों में अनेक पुस्तकालयों की पुस्तकें उपलब्ध हैं, जिनके अंश को आवश्यकतानुसार स्थानांतरित किया जा सकता है।

7. मनोरंजन एवं संगीत–इंटरनेट पर मनोरंजन के लिए विविध देशों के साथ भारतीय संगीत उपलब्ध हैं। इंटरनेट पर विदेशी भाषा के साथ हिंदी फिल्म के गानों का रसास्वादन भी लिया जा सकता है। वर्तमान

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

भूमंडलीकरण में पाश्चात्य आँधी को विस्तृत करने की भूमिका इंटरनेट कर रहा है। इंटरनेट पर मायावी जाल स्पष्ट दिखाई देता है। नैतिकतावादियों के द्वारा इस पर प्रतिबंध लगाने की आवाज़ भी उठाई जा रही है।

इस प्रकार संचार प्रौद्योगिकी में (इंटरनेट) की भूमिका से ही विश्व एक गाँव की तरह निकटस्थ एक इकाई बन गया है। हर व्यक्ति को घर बैठे ज्ञान-विज्ञान की समस्त जानकारी संभव हो गई है।

❑❑❑

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

मुद्रक : लक्ष्मी प्रिंटिंग इंडिया शाहदरा, दिल्ली-32

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection

CC-0. Nepal Sanskrit Academy, Kathmandu Collection